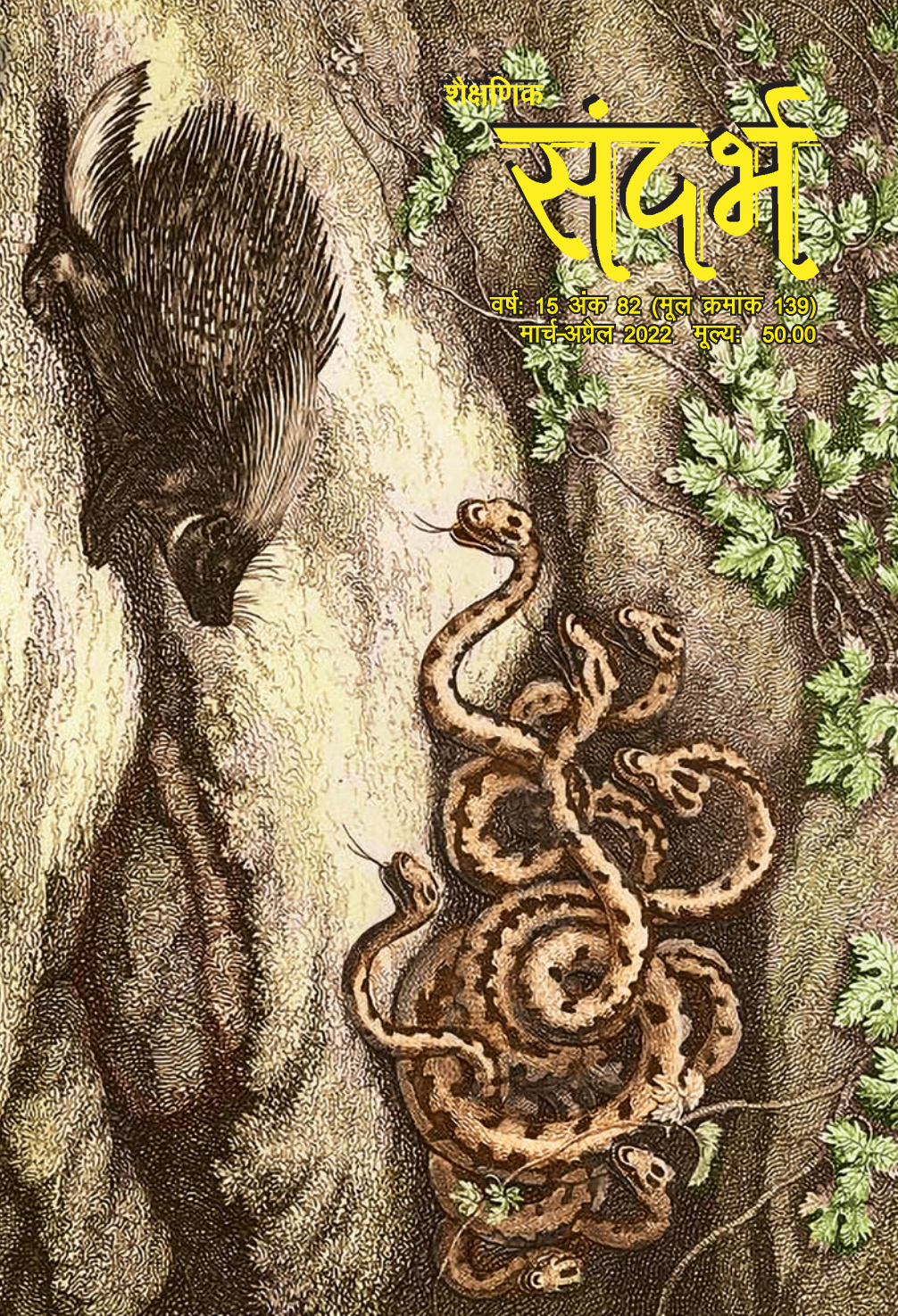

शैक्षणिक संदर्भ

वर्ष: 15 अंक 82 (मूल क्रमांक 139)
मार्च-अप्रैल 2022 मूल्य: 50.00

सम्पादन
राजेश खिंदरी
माधव केलकर

प्रबन्धकीय सह-सम्पादक
पारुल सोनी

सहायक सम्पादक
कोकिल चौधरी
अतुल वाधवानी

सम्पादकीय सहयोग
सुशील जोशी
उमा सुधीर

आवरण
राकेश खत्री

वितरण
झनक राम साहू

सहयोग
कमलेश यादव, अनमोल जैन

शैक्षणिक
संदर्भ

वर्ष: 15 अंक 82 (मूल क्रमांक 139)
मार्च-अप्रैल 2022

मूल्य: ₹ 50.00

एकलव्य फाउण्डेशन
जमनालाल बजाज परिसर
जाटखेड़ी, भोपाल-462 026 (म.प्र.)
फोन: +91 755 297 7770, 71, 72, 4200944
www.sandarbh.eklavya.in
सम्पादन: sandarbh@eklavya.in
वितरण: circulation@eklavya.in

अब *संदर्भ* आप तक पहुँचेगी रजिस्टर्ड पोस्ट से इसलिए सदस्यता शुल्क में वृद्धि की जा रही है।

सदस्यता शुल्क	एक साल (6 अंक)	तीन साल (18 अंक)	आजीवन
	450.00	1200.00	8000.00

मुखपृष्ठ: ईसॉप की अनेक दन्तकथाओं में से एक, 'सेही और साँप' पर आधारित यह चित्र सन् 1810 में अँग्रेज़ी चित्रकार सैमुएल हॉविट द्वारा बनाए गए चित्र की सम्पादित कृति है। आम तौर पर, सेही और साँपों का रिश्ता दोस्ताना नहीं माना जाता। तब सेही और साँप एक ही बिल में कैसे रहते होंगे? पाया गया है कि सेही द्वारा बड़ी पेचीदगी से बनाए गए बिलों में, जहाँ रहने के कमरे आपस में संकरी सुरंगों से जुड़े होते हैं, अजगर भी साथ रहा करते हैं, और वह भी एक वैज्ञानिक तरीके से सेही के साथ बँटवारा कर। ऐसे ही अनोखे अवलोकनों से भरा यह लेख पढ़िए पृष्ठ 5 पर।

कवर 3: पक्षियों के शरीर में पेशाब की थैली होना, उनके लिए अनुकूल नहीं है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि पक्षी पेशाब नहीं करते, करते ज़रूर हैं पर ठोस रूप में, द्रव रूप में नहीं। इस बार का सवालीराम इसी विषय पर विस्तार से बात करता है। पढ़िए पृष्ठ 81 पर।

यह अंक त्रिवेणी एजुकेशनल ट्रस्ट के वित्तीय सहयोग से प्रकाशित किया जा रहा है।

LINK : Cover 1 - https://en.wikipedia.org/wiki/File:Snakes_and_porcupine.jpg
Cover 3 - https://birdingoutdoors.com/bird-poop-frequencies-when-and-where-answered/

The 'Nature-Society Series: Andaman and Nicobar Islands' booklet has an innovative map with a brief text. It seeks to blend cartography and art, nature and society, information and criticality, map and text, and knowledge and change. The new map indicates places which can help students to see relationships in a complex landscape and ask questions which provide opportunities for students and teachers to learn in cooperation with each other. Also available for Maharashtra, Odisha, Lakshadweep, and Rajasthan. Maharashtra booklet is available in Marathi and Rajasthan in Hindi as well.

Coming Soon

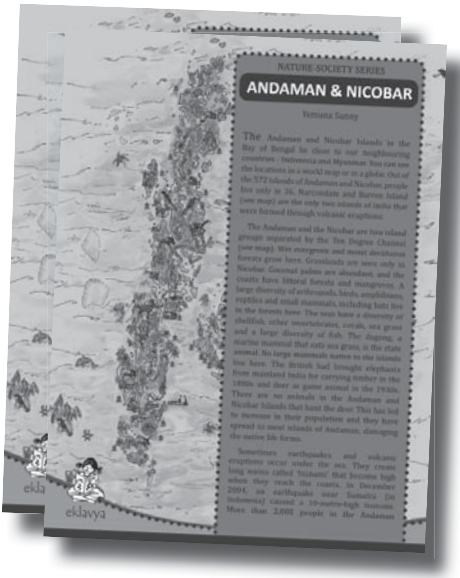

Nature-Society Series:
Andaman and Nicobar Islands
Author: Yemuna Sunny
Paperback, Pages – 16
Price: ₹ 80.00

To order please contact
+91 755 297 7770-71-72 or email at pitara@eklavya.in
www.eklavya.in | www.pitarakart.in

अजगर बिलों में सेही के साथ शान्ति से रहते हैं

आम तौर पर अजगरों के लिए सेही को खाना असामान्य नहीं है। वास्तव में, साँपों की कई प्रजातियाँ सेही और अन्य सींग वाले या क्विल्ड जानवरों को खाती हैं। हालाँकि, तकरीबन तीस पाउण्ड भोजन पचने में बहुत अधिक समय लग सकता है, परन्तु तब नहीं जब आप एक अजगर हैं क्योंकि भोजन के बाद अजगर में अपने चयापचय के साथ-साथ अपने अंगों के आकार को बदलने की भी अविश्वसनीय क्षमता होती है। ऐसे में अजगर एक ही बिल में, सेही के साथ शान्ति से कैसे रह सकते हैं? सेही बिलों का एक अत्यन्त पेचीदा तंत्र बनाती है जिसमें रहने के कमरे आपस में सुरंगों के माध्यम से जुड़े रहते हैं और ये सुरंगें काफी संकरी होती हैं। दोनों प्रजातियाँ: अजगर और सेही, एक वैज्ञानिक तरीके से उन सुरंगों का आपस में बँटवारा करके अलग-अलग कक्षों में रहती हैं। इस लेख में विस्तारपूर्वक पढ़ते हैं इस रोचक व्यवस्था और अजगर के क्रियाकलापों के बारे में।

05

हँसाते-रुलाते, रिश्ते-नाते

एकलव्य द्वारा किशोरी स्वास्थ्य कार्यक्रम के तहत किशोर-किशोरियों के साथ लगभग 28 माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शालाओं में नियमित कार्यशालाएँ आयोजित की जाती थीं। इन कार्यशालाओं में किशोरों के कई सवाल और अनुभव सामने आए। किशोरावस्था में हो रहे अनेकों बदलाव – शरीर में, भावनाओं में, रिश्तों में या खुद की पहचान में, – इन सबको समझने की जद्दोजहद परन्तु इस पर बात करने में झिझक, उनकी जिज्ञासा को और बढ़ा देती है। किशोरों के सवालों और अनुभवों को समेटते हुए शीघ्र ही प्रकाशित होने वाली किताब *बेटा करे सवाल* में दस अध्याय हैं और यह किशोरावस्था के कई महत्वपूर्ण पहलुओं पर चर्चा करती है। आइए, इस किताब के तीसरे अध्याय में समझते हैं कि कैसे बदलते शरीर और बदलती भावनाओं का प्रभाव किशोरों के रिश्तों पर पड़ता है।

10

शैक्षणिक संदर्भ

अंक-82 (मूल अंक-139), मार्च-अप्रैल 2022

इस अंक में

05 | अजगर बिलों में सेही के साथ शान्ति से रहते हैं
अदिति मुखर्जी

10 | हँसाते-रुलाते रिश्ते-नाते
अनु गुप्ता व संकेत करकरे

23 | बल्ब जलाओ जगमग-जगमग
कालू राम शर्मा

43 | पुवितम में विज्ञान: ज़िन्दगी से सीखना
मीनाक्षी उमेश

51 | दास्तान-ए-भोजन
मिहिर पाठक

59 | जेंडर की जकड़न को तोड़ती कहानियाँ
ब्रजेश वर्मा

66 | हिन्दी भाषा का साहित्यिक सफर!
अभिषेक दुबे

76 | रसोई में चिड़ियाघर
कृष्ण कुमार

81 | चिड़िया पेशाब करती है या नहीं?
सवालीराम

This short book on global warming discusses the causes of global warming; its science; who all are responsible for it; the steps taken and promised by local, national and global authorities; and what we can do. Based on conversations with people from different Indian states – including farmers, students, teachers, and environmental activists – public meetings, and talks, its broad purpose is to urge greater engagement, whether individual or collective, with climate change.

Coming Soon

Global warming in India
Science, Impacts, and Politics
Author: Nagraj Adve
Paperback, Pages – 80
Price: ₹80.00

To order please contact
+91 755 297 7770-71-72 or email at pitara@eklavya.in
www.eklavya.in | www.pitarakart.in

अजगर बिलों में सेही के साथ शान्ति से रहते हैं

एक वैज्ञानिक उत्सुकता

अदिति मुखर्जी

अदिति मुखर्जी यहाँ अजगर तथा सेही, जिनके बीच अक्सर एक शिकारी और शिकार का सम्बन्ध होता है, के एक ही बिल में शान्ति से साथ-साथ रहने के अपने अध्ययन के बारे में बता रही हैं।

मैं ऐसे जन्तुओं का अध्ययन करती हूँ, जो अपना घर ज़मीन के नीचे बनाते हैं। मेरा अध्ययन करने का स्थान भरतपुर स्थित केवलादेव राष्ट्रीय पक्षी उद्यान है, जहाँ मैंने 2013 में कलगीदार सेही (crested porcupine) अर्थात् *Hystrix indica* पर शोधकार्य शुरू किया था। ट्रेप-कैमरा तथा उनके बिलों में घुस सकने योग्य वीडियो कैमरे की सहायता से हमने यह जानने की कोशिश की कि सेही किस तरह अपना घर बनाती हैं।

अजगर-सेही के बीच आपसी बँटवारा

सेही बहुत ही रोचक एवं विशिष्ट निर्माणकर्ता हैं और बिलों का एक अत्यन्त पेचीदा तंत्र बनाती हैं जिसमें कक्ष सुरंगों के माध्यम से आपस में

यह चित्र इंटरनेट से साभार।

चित्र-1: *सेही अपने बिल में आराम करते हुए।*

जुड़े रहते हैं। वे अपना घर हम इन्सानों की तरह ही बनाती हैं - कल्पना कीजिए कि बैठक-कक्ष और शयनकक्ष भूमिगत गलियारों से आपस में जुड़े हुए हैं। ये सुरंगें काफी संकरी होती हैं। हमारा कैमरा लगभग 11 मीटर की गहराई तक जा पाया परन्तु सुरंगें इससे भी अधिक लम्बी होती हैं जिनकी औसत ऊँचाई 10 से 50 सेंटीमीटर और चौड़ाई 20 से 50 सेंटीमीटर होती है। कक्ष सुरंगों से दुगने आकार के होते हैं। सेही के बिलों की विस्तृत आन्तरिक संरचना एक विस्मयकारी खोज थी परन्तु आगे और भी आश्चर्यजनक बातें हमारी प्रतीक्षा कर रही थीं।

खोज करते हुए हमें पता चला कि भारतीय चट्टानी अजगर (Indian rock python) अर्थात् *Python molurus* भी रहने के लिए उन घरों का इस्तेमाल कर रहे थे। यह वास्तव में आश्चर्य में डालने वाली बात थी क्योंकि सेही और अजगर के बीच शिकार और शिकारी का सम्बन्ध है। लेकिन दोनों प्रजातियों ने एक वैज्ञानिक तरीके से उस स्थान का आपस में बँटवारा कर लिया था – सेही अलग कक्षों में रहती हैं और तभी बाहर निकलती हैं जब अजगर महाशय अपने कक्ष में आराम फर्मा रहे होते हैं। अजगर भी अपनी घर वापसी से पहले, बाहर से ही पेट -पूजा करके आते हैं। इनके अतिरिक्त जीव-जन्तुओं की कुछ अन्य प्रजातियों जैसे पत्ती जैसी नाक वाली चमगादड़ों के रहने की जगह भी इन बिलों के कक्ष ही हैं। वैसे तो अजगर चमगादड़ों का भी शिकार करते हैं परन्तु ये अलग-अलग कक्षों में रहते हैं। एक साथ रहने के बावजूद शिकार और शिकारी का एक-दूसरे से न मिल पाना, वास्तव में आश्चर्यजनक था।

सुनहरे रंग के गीदड़ों ने भी उन बिलों में अपने लिए ठिकाना ढूँढ़ने की कोशिश की थी लेकिन अजगर और गीदड़ों के बीच मुठभेड़ हो गई थी। जगह पर कब्ज़े की इस लड़ाई में गीदड़, अजगर तथा सेही, दोनों को मारने की कोशिश भी करते हैं। अजगर और सेही आपसी शान्ति से रहते हैं और शायद इस प्रकार एक-दूसरे से सुरक्षा की भावना भी पाते हैं। ये दोनों जीव स्थान का परस्पर बँटवारा, काफी बुद्धिमानी से करते हैं। उदाहरण के तौर पर सेही अपने कक्ष में जाने के बाद, उसका प्रवेशद्वार इस तरह बन्द कर लेती है जिस प्रकार हम अपने कक्ष का दरवाज़ा बन्द कर लेते हैं। हालाँकि, अजगर का आकार बड़ा होता है, फिर भी उन्हें अपने बिल में बहुत कम जगह चाहिए होती है। चूँकि उन्हें खुद को गर्म रखने के लिए सिर्फ कुण्डली मारकर रहने की ज़रूरत होती है, इसलिए उनके कक्ष आकार में छोटे होते हैं।

भरतपुर एक अर्धशुष्क इलाका है और वहाँ का तापमान 0.5 डिग्री से

चित्र-2: *सुनहरे रंग के गीदड़ भी सेही के बिल में अपने लिए ठिकाना ढूँढ़ने की कोशिश करते हैं और कब्ज़े की इस लड़ाई में गीदड़, अजगर तथा सेही, दोनों को मारने की कोशिश भी करते हैं।*

50 डिग्री सेंटीग्रेड तक रहता है। गर्मी के दिनों में मैं अपना मैदानी कार्य सुबह 3.30 बजे शुरू कर देती हूँ। 10 बजे तक अपना काम पूरा करके, एकत्रित सूचनाओं का विश्लेषण करने के लिए अपने फील्ड स्टेशन पर आ जाती हूँ। सर्दी के मौसम के ठण्डे दिनों में मैदानी कार्य करना आसान होता है। चूँकि मैं जानवरों की विभिन्न प्रजातियों का अध्ययन करती हूँ, मेरा समय उनकी आदतों के अनुसार व्यवस्थित होता है। उदाहरण के लिए, अजगर सुबह 8 बजे के आसपास अपने बिलों से निकलते हैं और मैं शाम तक उनका पीछा करके, उनका अध्ययन करती हूँ।

अजगर का व्यवहार

मुझसे अक्सर पूछा जाता है कि अजगरों के इतने पास जाने में क्या मुझे डर नहीं लगता। मेरा उत्तर एकदम साफ होता है - नहीं। मैं हमेशा से इन जीवों के बारे में जानने के लिए उत्सुक रही हूँ। बचपन में मैंने *जंगल बुक* किताब पढ़ी थी और 'का' नाम के अजगर में मेरी रुचि जागी। यद्यपि इनके बारे में काफी नकारात्मक बातें की जाती हैं लेकिन मैं इस जीव से काफी मंत्रमुग्ध रही हूँ। बाद में, मैंने अजगरों का वैज्ञानिक अध्ययन किया और विज्ञान उत्सुकता जगाता है, डर नहीं।

मैंने पाया है कि ये जीव शर्मीले होते हैं और इंडियन रॉक पायथन बहुत शान्त होते हैं। अजगर जब अपने बिलों से बाहर निकलकर धूपस्नान के लिए आते हैं तो हम उनके क्रिया-कलापों का अध्ययन करते हैं। हालाँकि, ऐसा करते समय हम उनके धूपस्नान में कोई व्यवधान

चित्र-3: *अच्छे स्वास्थ्य, सही शारीरिक विकास आदि के लिए, इंडियन रॉक पायथन को बिना किसी व्यवधान के धूप सेंकना ज़रूरी होता है।*

नहीं डालते। उनके स्वास्थ्य, शारीरिक विकास, रेंगने की गति, पाचन और प्रजनन क्रियाओं को बनाए रखने के लिए, उनका धूपस्नान करना आवश्यक होता है। इसीलिए सभी शीतरुधिर प्राणी धूपस्नान करते हैं। अध्ययन के दौरान हमने पाया कि भरतपुर में पर्यटकों के आने-जाने और उनके शोरगुल से अजगरों के धूपस्नान में काफी व्यवधान होता है। इस प्रकार हमारे अध्ययन से वन विभाग को पर्यटकों की आवाजाही पर ज़रूरी रोक लगाने में भी मदद मिली।

आम धारणा के विपरीत, अजगर आक्रामक जन्तु नहीं होते। ये बहुत ही संवेदनशील और एकान्तप्रेमी होते हैं – वे 150 मीटर दूर से ही हमारी आहट सुन लेते हैं और छिपने की कोशिश करते हैं। उनको चौंकाने से बचने के लिए, मैं अपने ट्रेप-कैमरे के साथ ज़मीन पर घण्टों बैठी रहती हूँ और धीमे-धीमे रेंगकर ही चलती हूँ ताकि वे मुझसे डर न जाएँ। हालाँकि, जब वे मुझे रोज़ देखने लगे तो थोड़े निडर होकर आराम-से और चुपचाप सूरज की रोशनी में तब तक पड़े ऊँघते रहते थे जब तक कि उनका वापस जाने का समय नहीं हो जाता था।

जानवरों की इस संकटग्रत प्रजाति को भारत के 'वन्यजीव संरक्षण कानून' की प्रथम सूची में रखा गया है, अर्थात् ये अत्यन्त संरक्षित प्रजाति

चित्र-4: *आम धारणा के विपरीत, अजगर शर्मीले और शान्त जीव होते हैं। ये मनुष्य-गतिविधि के प्रति बहुत संवेदनशील होते हैं जो 150 मीटर दूर से ही आहट सुन लेते हैं और व्यवधानों का सामना करने की बजाय छिपना पसन्द करते हैं।*

है। इसके बावजूद अक्सर इन्हें मार दिया जाता है, या इनका शिकार करके पकड़ लिया जाता है। ये बाघ और हाथियों की तरह आकर्षक जीव नहीं हैं जिनके संरक्षण के लिए जन भावनाएँ उमड़ती हों। वास्तविकता में, लोग इनसे काफी डरते हैं और इन्हें बचाने से कतराते हैं। लोगों को यह समझाना सरीसृप विज्ञानियों के लिए अक्सर काफी कठिन होता है कि अजगरों के सामने खुद को बचाए रखने की कितनी बड़ी चुनौती है। परन्तु फिर भी वैज्ञानिक इस सम्बन्ध में जानकारी फैलाने और लोगों को सजग करने की पूरी कोशिश में जुटे हैं। मैंने जाना है कि ये प्राणी प्रकृति का वरदान हैं – उनके बारे में जानना और उनको बचाना, हमारे अपने जीवन की समृद्धि को बढ़ाता है।

अदिति मुखर्जी: प्रकृति संरक्षण वैज्ञानिक हैं और सालिम अली पक्षीविज्ञान एवं प्रकृतिविज्ञान केन्द्र में कार्यरत हैं।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: कोकिल चौधरी: *संदर्भ* पत्रिका से सम्बद्ध हैं।

सभी फोटो: अदिति मुखर्जी

यह लेख *टाइम्स इवोक* पत्रिका से साभार।

अजगर से सम्बन्धित एक अन्य लेख 'अजगर की शरीर-क्रिया की समझ के इन्सानी फायदे' *संदर्भ*, अंक-130 (सितम्बर-अक्टूबर, 2020) में पढ़ा जा सकता है।

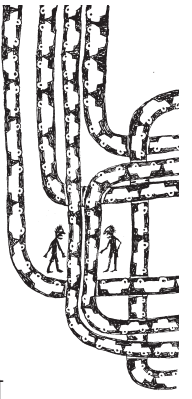

पुस्तक अंश

हँसाते-रुलाते, रिश्ते-नाते

अनु गुप्ता व संकेत करकरे

किशोरावस्था में लड़के अनेक शारीरिक व भावनात्मक बदलावों से गुज़र रहे होते हैं। पितृसत्तात्मक सामाजिक ताने-बाने में अक्सर इन बदलावों पर खुलकर बातचीत कर पाना और एक स्वस्थ नज़रिया विकसित कर पाना सम्भव नहीं होता। इसी कमी को ध्यान में रखकर *एकलव्य* ने *बेटा करे सवाल* किताब विकसित की है जिसके अलग-अलग अध्यायों में किशोरावस्था के विभिन्न आयामों व उनके सामाजिक-सांस्कृतिक, शारीरिक व भावनात्मक पहलुओं की चर्चा की गई है।

आइए, पढ़ते हैं इस किताब का एक महत्वपूर्ण हिस्सा।

पिछले अध्यायों में तुमने किशोरावस्था में बदलते शरीर, बदलती भावनाओं और बदलती सोच के बारे में जाना। इतने सारे बदलावों की वजह से तुम्हारा चीज़ों को देखने का नज़रिया और खुद को व्यक्त करने का तरीका भी बदलता है। इन बदलावों से सिर्फ तुम ही नहीं, तुम्हारे आसपास के लोग भी प्रभावित होते हैं। इसका असर तुम्हारे रिश्तों पर भी पड़ता है। इस अध्याय में किशोरावस्था के एक और महत्वपूर्ण पहलू पर चर्चा करेंगे – रिश्ते।

ज़रा सोचो, तुम्हारे जीवन में कौन-कौन-से रिश्ते हैं? कम-से-कम 5-6 रिश्ते तो दिमाग में आए ही होंगे। एक कार्यशाला में किशोरों ने कई तरह के रिश्तों की बात की:

टीचर

दोस्त

कोई पसन्दीदा जगह

पेड़-पौधे

पोस्टमैन, सब्ज़ीवाले, कचरा इकट्ठा करने वाले, दुकानदार आदि

परिवार (माता-पिता, भाई-बहन, दादा-दादी, नाना-नानी, चाचा-चाची, बुआ-फूफा, मामा-मामी, मौसी-मौसा आदि)

साथ में पढ़ने वाले

वे लोग जो गुज़र चुके हैं

गर्लफ्रेंड/बॉयफ्रेंड

खुद से रिश्ता

पड़ोसी

ऐसे लोग जिनसे मिले न हो

पालतू जानवर/पक्षी

रिश्ते जीवन का एक आम और अहम पहलू हैं, और ज़ाहिर है कि उनका असर हम पर ज़िन्दगी भर पड़ता है। लोगों का तुम्हारे साथ व्यवहार और तुम्हारा उनके संग व्यवहार कई चीज़ों से प्रभावित होता है – तुम कौन-सी जाति के हो, अमीर हो या गरीब, लड़का हो या लड़की, उम्र में बड़े हो या छोटे, शादीशुदा हो या नहीं। रिश्तों पर तुम्हारी भावनाओं, तुमसे की गई अपेक्षाओं और समाज के रीति-रिवाज़ों का भी असर पड़ता है। तुम अपने रिश्तों को किस दृष्टि से देखते हो, उस पर संस्कृति का भी प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए, लड़के-लड़कियाँ एक-दूसरे से कैसे व्यवहार कर सकते हैं, वह संस्कृति से प्रभावित होता है। कुछ देशों में लड़के-लड़कियों की दोस्ती में खुलापन रहता है, छूट होती है पर हमारे यहाँ इस दोस्ती को कुछ अलग ही नज़र से देखा जाता है। फिर कुछ रिश्तों से तुम्हें खुशी महसूस होती होगी तो कुछ से उदासी, गुस्सा, ईर्ष्या आदि। कुछ रिश्ते मददगार लगते होंगे, तो कुछ एक बन्धन। ऐसा क्या है जिससे कुछ लोगों से रिश्ते अच्छे होते हैं और कुछ से नहीं?

यह सब पढ़ने से पहले अपने रिश्तों के बारे में गौर-से सोचो। नीचे दिए गए सवाल मददगार हो सकते हैं:

जब हमने ये सवाल किशोरों से पूछे तो उन्होंने बताया कि रिश्तों में खुलापन, अपनापन, प्यार, हँसी-मज़ाक उन्हें पसन्द है जबकि हिचकिचाहट, खुदगर्ज़ी, उकसावा और चुगलखोरी उन्हें नहीं सुहाते।

कुछ खास रिश्ते

अलग-अलग रिश्तों की जो सूची हमने देखी थी, उसमें सबसे पहले दो रिश्ते दोस्तों और परिवारवालों के साथ थे। चूँकि तुम्हारा ज़्यादातर वक्त इन दोनों के साथ बीतता है, तुम में हो रहे बदलावों का सबसे ज़्यादा प्रभाव इन्हीं पर पड़ता है। इसलिए हम यहाँ अभिभावकों, भाई-बहन और दोस्तों के साथ बदलते रिश्तों पर चर्चा करेंगे।

अभिभावकों से रिश्ता

सभी के परिवार एक-जैसे नहीं होते – कुछ परिवारों में सिर्फ माता-पिता और भाई-बहन होते हैं, तो कुछ में चाचा, बुआ और दादा-दादी भी साथ रहते हैं। कुछ बच्चों के माता या पिता न होने से या पढ़ाई के लिए वे किसी और रिश्तेदार के पास रहते हैं, तो कुछ परिवारों में बच्चों को गोद लिया जाता है। कभी-कभी माता-पिता अलग हो जाते हैं या नौकरी की वजह से अलग रहते हैं, तो बच्चे किसी एक के साथ या दोनों के साथ कुछ वक्त रहते हैं। इसीलिए यहाँ पर हम 'अभिभावक' शब्द का इस्तेमाल कर रहे हैं। अभिभावक मतलब जो तुम्हारी देखरेख करते हैं, फिर चाहे वे माता-पिता हों या कोई और।

किशोरावस्था में तुम्हारा परिवारवालों के साथ वक्त बिताना बचपन की तुलना में कम हो जाता है क्योंकि अब तुम दोस्तों के साथ ज़्यादा समय बिताने लगते हो। इस दौरान तुम्हारी सोच में हो रहे बदलावों के कारण तुम्हारा चीज़ों को लेकर अपना एक नज़रिया बनने लगता है जो तुम्हारे अभिभावकों से अलग हो सकता है। फिर तुम्हें लगने लगता है कि वे तुम्हें समझ ही नहीं रहे। ऐसे में उनके साथ बहस होना आम बात है।

इमरान: मैं बाहर जा रहा हूँ, 10 बजे लौटूँगा।

माँ: 10 बजे? तो वापिस ही क्यों आ रहा है? 8 बजे आना, नहीं तो उन आवारा दोस्तों के साथ ही रहना।

इमरान: आप उन्हें आवारा क्यों कहते हो? आपको अच्छे नहीं लगते, तो उनको घर तो नहीं लाता न? आप नहीं तय कर सकते, मैं किन दोस्तों के साथ वक्त बिताऊँ।

पिता: तुमसे बड़े हैं, हक है हमारा तुम्हारा भला सोचना।

इमरान: कुछ भी। उनसे अलग रहकर अच्छा नहीं लगता, इसलिए तो उनके साथ रहता हूँ।

माँ: कमरा साफ किया? तीन दिनों से गन्दा पड़ा है।

इमरान: फिर से वही? मैंने कहा न, वह मेरा कमरा है। रखने दो जैसा मैं चाहूँ।

पिता: तुम आजकल बहस कुछ ज़्यादा ही करते हो। पता नहीं कहाँ से ये सब सीख रहे हो। और तुम्हारी हेयर स्टाइल तो एकदम बकवास है। और यह कान के कुण्डल और शर्ट के खुले बटन। एकदम आवारा लग रहे हो, उन्हीं दोस्तों की तरह।

इमरान: आपको मुझसे प्रॉब्लम क्या है? कुछ भी करूँ तो डाँटते रहते हो। यह हेयर स्टाइल लेटेस्ट फैशन है, आपके ज़माने से अलग ही होगी न। डिज़ाइनर कपड़े, शर्ट के बटन खुले रखना, कानों में कुण्डल, सब आजकल काफी हिट हैं। इन सबसे कोई आवारा नहीं हो जाता। मुझे और बहस नहीं करनी, मैं जा रहा हूँ।

जज़्बाती सहारे के लिए तुम अब अभिभावकों पर ज़्यादा निर्भर नहीं रहते। बड़े होने के साथ तुम अपने आप, अभिभावकों के सहारे के बिना, निर्णय भी लेने लगते हो। ऐसा नहीं है कि तुम एकदम-से उनसे दूर हो जाते हो। भले ही तुम अपने निर्णय खुद लेने लगो, अभिभावकों से जुड़ाव तुम्हारे लिए फायदेमन्द होता है।

पिताजी: अरे बेटा, कल मैंने तुम्हारे दोस्त सुजीत को सिगरेट फूँकते देखा था। तुम उससे दूर ही रहना, क्या पता कल तुम्हें भी वह आदत लग जाए!!!

सोहम: पापा, आप ऐसा कैसे कह सकते हो? क्या मुझे इतने सालों में आपसे तम्बाकू खाने की आदत लगी? नहीं न? तो सुजीत की आदत मुझे नहीं लगेगी। और वैसे भी, आप खुद नशा करते हैं, तो मेरे दोस्त के बारे में टीका-टिप्पणी करना ठीक है क्या?

माँ: वाह, बड़ी तरफदारी कर रहा है तू अपने दोस्त की... उसी ने सिखाया है उल्टा जवाब देना?

सोहम: जो सही है, वही कह रहा हूँ। आपके जैसे नहीं कि सबको सिखाएँ कि सच बोलना चाहिए, पर जब बाजूवाली कमला आंटी आती हैं, तो कैसे झूठ-पे-झूठ बोलती हो आप। मुझे वैसा नहीं करना।

पिछले अध्याय में हमने देखा था कि तुम्हें जोशीली गतिविधियाँ और जोखिम उठाना अच्छा लगता है। लेकिन तुम जोखिम उठाने के नतीजे परख नहीं पाते। ऐसे में अगर घरवाले तुम्हारे निर्णयों पर थोड़ी रोक-टोक लगाते हैं तो उससे तुम्हारे जोखिम उठाने पर नियंत्रण लग जाता है और इससे तुम ज़्यादा सुरक्षित रह पाते हो।

तेज़ी-से हो रहे इन बदलावों को समझने में तुम्हारे अभिभावकों को भी थोड़ी कठिनाई आती है और समय लगता है। जब तुम बच्चे थे, तब उनकी सारी बातें मान लेते थे, और मतभेद होने की सम्भावना कम होती थी। पर अब तुम बड़े हो रहे हो और चीज़ों को लेकर अपनी राय बयान करने लगते हो। यह बात अभिभावकों के लिए नई होती है और तुम्हारी राय से उनके प्रभुत्व पर असर पड़ता है। वे समझ नहीं पाते कि तुमसे बच्चे-जैसा व्यवहार करें या बड़े-जैसा। ऐसे व्यवहार से तुम्हें उन पर गुस्सा आ सकता है। मतभेद होने पर थोड़ी देर एक-दूसरे से दूर कहीं शान्त माहौल में चले जाने पर शायद तुम एक-दूसरे को बेहतर समझ पाओगे। फिर ठण्डे दिमाग से चर्चा करके मसले का हल आसानी-से निकल आएगा। कभी-कभी अभिभावकों से बातचीत करना बिलकुल भी मुमकिन नहीं होता, क्योंकि तुम्हें पता होता है कि बात करने से बात ज़्यादा बिगड़ेगी, तो ऐसी स्थिति में किसी और वयस्क की मदद लेना फायदेमन्द रहता है।

आज़ादी और अपनी सत्ता

हमें लगता है कि हम सही हैं मगर माता-पिता को लगता है कि हम गलत हैं। अब तो मैं बड़ा हो गया हूँ तो मुझे भी मालूम है कि मैं सही हूँ या गलत।

हमारे माता-पिता हमें हर काम की इजाज़त नहीं देते। बोलते हैं कि अभी तुम इस काम के लिए बहुत छोटे हो या फिर बोल देते हैं कि तुम बड़े हो गए हो।

अब हम बड़े हो गए तो हमें लगता है कि हम आज़ाद हैं। हम हर काम कर सकते हैं, हमें कोई रोक नहीं सकता।

भाई-बहन से रिश्ता

जब हम अपने भाई-बहन के साथ हमारे रिश्ते के बारे में सोचते हैं तो कई दृश्य सामने आ जाते हैं – चोटी खींचना, हँसी-मज़ाक करना, खेलना-कूदना, एक-दूसरे का खयाल रखना, लड़ाई-झगड़ा करना। बड़ों से डाँट पड़ने पर एक-दूसरे के आँसू भाई-बहन ही तो पोंछते हैं। स्कूल में टीचर से परेशान हो, या कोई तुम पर रौब जमा रहा हो, या फिर पढ़ाई में कुछ दिक्कतें हों, तब बड़े भाई-बहन का सहारा होने से चीज़ें आसान हो जाती हैं। किशोरावस्था में सबसे ज़्यादा अनबन भी उन्हीं के साथ होती है। वैसे तो इस अनबन के कई कारण हो

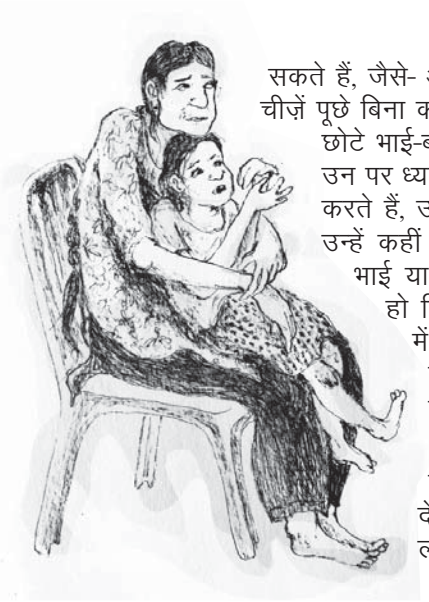

सकते हैं, जैसे- अभिभावकों का चहेता कौन है? उसने मेरी चीज़ें पूछे बिना क्यों लीं और लीं तो वापिस क्यों नहीं रखीं? छोटे भाई-बहनों को लग सकता है कि बड़े भाई-बहन उन पर ध्यान नहीं देते, उनसे बच्चों की तरह व्यवहार करते हैं, उनकी बातों को नज़रअन्दाज़ करते हैं और उन्हें कहीं भी साथ लेकर नहीं जाते। यदि तुम बड़े भाई या बहन हो तो तुम इस बात से चिढ़ जाते हो कि तुम्हारे छोटे भाई या बहन हमेशा बीच में टाँग अड़ाते हैं और बचकाने खेल खेलना चाहते हैं जिसमें तुम्हें बिलकुल रुचि नहीं है।

अगर इस दौरान तुम्हें ऐसा लगे कि परिवारवाले तुम में से एक की कुछ खास देखरेख करते हैं, जैसे - एक के लिए चीज़ें लाना, शिक्षा पर ज़्यादा खर्च करना, तब हीन भावना या मनमुटाव पैदा हो सकता है। कुछ घरों में बहनों को भाइयों की तुलना में कम सुविधाएँ दी जाती हैं और इससे उनको काफी ठेस पहुँच सकती है। इस मुद्दे को हम जेण्डर वाले अध्याय में विस्तार से परखेंगे।

दोस्तों से रिश्ता

किशोरावस्था में परिवारवालों की तुलना में दोस्तों के साथ वक्त बिताना बढ़ जाता है। दोस्त उन्हीं बदलावों से गुज़र रहे होते हैं जिनसे तुम गुज़र रहे हो। बड़े होने की यह हड़बड़ी दोस्तों के साथ थोड़ी आसान हो जाती है। दोस्तों से ऐसी सभी बातें खुलकर करते हो जो घर पर नहीं कर सकते, जैसे कि सेक्स और उससे जुड़ी भावनाएँ। दोस्तों से प्यार और इज्ज़त पाना

बहुत ज़रूरी हो जाता है। और अगर दोस्तों ने तुम्हें अपनाया नहीं और नीचा दिखाया तो तुम्हें बहुत ज़्यादा तनाव और उदासी महसूस हो सकती है। काफी किशोरों के लिए सबसे महत्वपूर्ण पहलू यह होता है कि दोस्तों की नज़र में वे कैसे हैं।

दोस्तों का प्रभाव तुम्हारे मूल्यों, स्कूल में व्यवहार, कपड़े पहनने के तरीके, कौन-से गाने सुनते हो, वगैरह सब पर पड़ता है। तुम्हारे करीबी रिश्तों और यौन रुझान पर भी इनका असर होता है। यौन रुझान के बारे में हम कुछ देर में बात करेंगे।

यह देखा गया है कि किशोर अपने ग्रुप के मूल्य, रुचि और अन्दाज़ बनाए रखते हैं जिनसे कि वे बाकी ग्रुपों से अलग दिखें। अगर तुम्हारे लिए दोस्तों जैसा होना और उनसे अपनाया जाना बहुत ज़रूरी है, तो तुम पर इस दबाव का असर काफी ज़्यादा होगा। तुम्हें लगेगा कि अगर तुम उनके जैसे नहीं रहोगे तो वे तुम्हें अपनाएँगे नहीं और तुम्हारा मज़ाक उड़ाएँगे। पिछले अध्याय में हमने बात की थी कि दोस्तों के प्रभाव से तुम आसानी-से जोखिम भी उठा लेते हो।

स्कूल में मेरी दोस्ती जितनी लड़कों से है, उतनी लड़कियों से भी है। मेरे दोस्त बहुत अच्छे हैं पर कभी-कभी हमारी लड़ाई होने से हम बात नहीं करते। ज़्यादातर लड़ाई की वजह लड़कियाँ होती हैं। पता है क्यों, क्योंकि मैं यदि लड़कियों से बात करता हूँ तो उन्हें पसन्द नहीं आता। (विनोद, 17 वर्ष)

मैं अपने दोस्त से हर बात करता हूँ। किसी भी पर्सनल बात को नहीं छुपाता हूँ, चाहे वह लड़की की बात हो या टेस्ट में कम नम्बर आए हों। (विशाल, 17 वर्ष)

कहते हैं कि माता-पिता के बाद एक दोस्त ही है जो हमें जान पाता है। दोस्त अपने हर काम में, चाहे वह सुख हो या दुख, अपना साथ देता ही है। दोस्त से अपनी लाइफ के बारे में बात कर सकते हैं। वो बातें भी जो अपने माता-पिता या भाई-बहन से नहीं कर सकते।

(कुनाल, 17 वर्ष)

मुझे ये नहीं समझ आता कि किशोरावस्था में लड़कों को लड़कियों से बात करने में और दोस्ती करने में क्यों अच्छा लगता है। एक और बात, इस उम्र में लड़कों या लड़कियों को प्यार क्यों होता है? कैसे होता है? होता है तो यह बात हम अपने माता-पिता से नहीं कहते हैं। अपने मित्रों के साथ मन की बात ओपन तरीके से कर सकते हैं। भले ही वह लव की ही क्यों न हो। (अजय, 17 वर्ष)

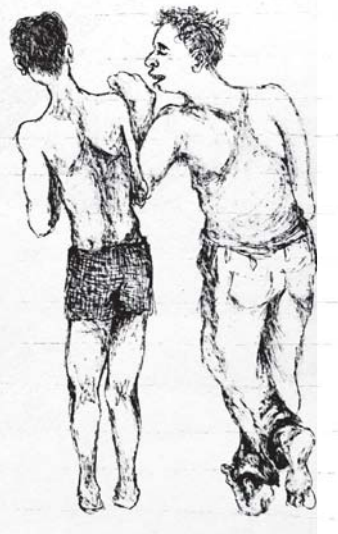

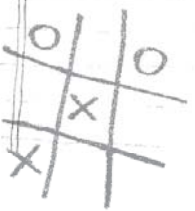

पड़ोस में एक दोस्त है जो मेरे भाई जैसा है। वो थोड़ा मोटा है तो सब उसे चिढ़ाते हैं। मैं उन्हें डाँटता हूँ और लड़ाई भी करता हूँ। (मनीष, 12 वर्ष)

दोस्तों के साथ रिश्ता दो प्रकार का है: पुराने दोस्त और नए दोस्त। नए दोस्तों के साथ थोड़ा खट्टा, थोड़ा मीठा रिश्ता है। हम आपस में लगभग सभी बातें एक-दूसरे को बताते हैं – कुछ पर्सनल और कुछ ऐसी जो सब जानते हैं। मेरे लिए परिवार और दोस्तों के बीच ज़्यादा फर्क नहीं है। (महेश, 16 वर्ष)

जब आप कुछ करने को घबरा रहे होते हो तो आपका दोस्त ही आपका हौसला बुलन्द रखता है कि आपको इस चीज़ में ज़रूर सफलता मिलेगी। (दीपेश, 16 वर्ष)

अनु गुप्ता: *एकलव्य* के किशोरावस्था शिक्षण कार्यक्रम से सम्बद्ध।

संकेत करकरे: इंजीनियर और शिक्षक हैं। अँग्रेज़ी और गणित विषयों में विशेष रुचि।

सम्पादन: सुशील जोशी, सीमा एवं रुचि शेवड़े।

चित्र: कैरन हैडॉक व परोमिता मुखर्जी। कैरन हैडॉक को हाल ही में पब्लिशिंग नेक्स्ट इंडस्ट्री अवार्ड्स 2021 - इलस्ट्रेटर ऑफ द इयर (उप-विजेता) - दिया गया है।

यह पुस्तक *एकलव्य* द्वारा शीघ्र ही प्रकाशित होने वाली है।

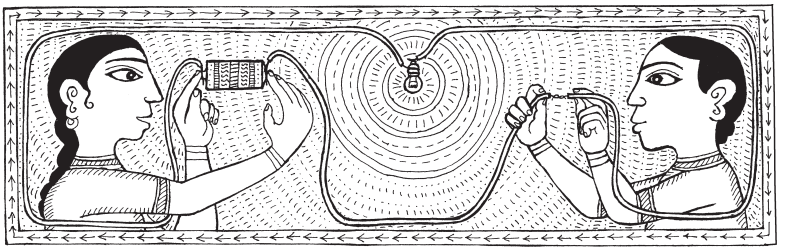

चित्र: कैरन हैडॉक

बल्ब जलाओ जगमग-जगमग

कालू राम शर्मा

"देखो... मैं आज गणित में तड़ी मारने वाला हूँ।" भागचन्द्र ने गली के मोड़ पर इसरार और नारंगी से कहा।

"क्यों?" इसरार और नारंगी ने एक-साथ पूछा।

परेशान भागचन्द्र बोला, "अगर मैं आज गणित की क्लास में दिख गया, तो मास्साब तो पीट ही डालेंगे। गणित के सवाल तो आ ही नहीं रहे..."

"और जो क्लास में मास्साब पूछें, तो?" नारंगी ठिठक गई और चिन्ता में पड़ गई।

"सोचने तो दे!" भागचन्द्र को डर सता रहा था। डर उसके यह तय करने में बाधक बन रहा था कि आखिर वह गणित के पीरियड में नहीं जाने की क्या वजह बताएगा। बाद में उसका क्या हाल होगा, इसे लेकर वह चिन्तित हो रहा था। वह बुदबुदाया, "क्या करूँ...? मास्साब ने सवाल हल करने को दिए थे। उनमें से एक भी नहीं कर पाया हूँ।"

भागचन्द्र सोचे जा रहा था कि वह गलत कर रहा है। वह महसूस कर रहा था कि उसके दोस्त भी उसे गलत समझ रहे हैं। वह बेबस और लाचार दिखाई दे रहा था। "चिन्ता मत करो, कह दूँगा पेट दर्द हो रहा था। ...बस।" भागचन्द्र ने पेट पकड़ते हुए नाटकीय मंचन किया, मानो सचमुच ही उसका पेट दर्द कर रहा हो।

"भागू, तू गलत कर रहा है।" इसरार बोला।

"अरे, मैं विज्ञान में तो आ ही रहा हूँ। आज 'बिजली के कारनामे' जो होने वाले हैं।" भागचन्द्र पेट पकड़े ही बोला, "देख, मैं तो घर से सेल भी लेकर आया हूँ।"

"और...?" इसरार कहते-कहते रुक गया।

"और क्या...? बोल..." भागचन्द्र के चेहरे पर डर साफ दिख रहा था, मगर वह उस डर को छिपाने की पूरी कोशिश कर रहा था। एक डर तो गणित की कक्षा का, और दूसरा, स्कूल से गायब रहने का।

"...मास्साब ने हमसे पूछा तो?" इसरार सहमकर बोला।

"मेरा पूछें, तो बोल देना 'मालूम नहीं।' ...बस!" भागचन्द्र अपने आप को निश्चिन्त करने की कोशिश कर रहा था। "चलो, तो मैं स्कूल के पीछे खाई की तरफ जा रहा हूँ।" यह कहते हुए वह स्कूल का रास्ता बदलकर चल दिया।

जाते हुए नारंगी, भागचन्द्र की ओर मुड़कर बोली, "मास्साब ने देख लिया तो तेरे बारह बजा देंगे।"

"हाँ, तेरे घर खबर पहुँच गई, तो तेरे बापू भी छोड़ने वाले नहीं।" इसरार चिन्तित हो रहा था कि कहीं ये बात भागचन्द्र के बापू से होते हुए उसके वालिद तक न पहुँच जाए।

नारंगी और इसरार स्कूल में प्रवेश करते हुए एक-दूसरे से कह रहे थे, "फँसेगा यह आज।" गणित का पीरियड लग चुका था। गणित वाले शिक्षक कक्षा में जैसे ही घुसे, पूरी कक्षा में सन्नाटा छा गया। वजह थी – ज़्यादातर बच्चों को जो गृहकार्य दिया गया था, उसे हल न कर पाना।

नारंगी सोच रही थी कि अगर वह लड़का होती, तो वह भी आज हरगिज़ स्कूल नहीं आती। फिर उसे महसूस हुआ कि लड़की होने से क्या हुआ, बहाने बनाना तो उसको भी आता है। वह खुद को हिम्मत दिलाने की कोशिश कर रही थी। नारंगी सोच रही थी कि भागचन्द्र अन्दर से जितना डरा हुआ है, उतनी ही वह अन्दर से हिम्मत वाली है।

उधर इसरार सोच में पड़ा हुआ था, 'बच्चू, गणित से किसी तरह पीछा छूट भी गया, तो सामाजिक अध्ययन जान ले लेगा।' दरअसल, उसने अब तक सामाजिक अध्ययन की कॉपी में कुछ भी नहीं लिखा था। यही हाल रघु, डमरू और दूसरों का भी था।

बच गए!

कक्षा में हाज़िरी ली जा चुकी थी। गणित के मास्साब ने कक्षा में नज़र दौड़ाई और बोले, "अच्छा, तो तुम सब अपना-अपना काम करो, ठीक है?"

इतना कहकर मास्साब हाज़िरी रजिस्टर बगल में दबाकर प्रधानाध्यापक के कमरे की ओर चल दिए। मास्साब ने कक्षा की दहलीज़ से कदम बाहर रखे ही थे कि बच्चों के चेहरों पर से डर भी रफूचक्कर हो गया, और उसकी जगह खुशी ने ले ली।

नारंगी ने एक लम्बी साँस ली और अपने बगल में बैठे डमरू को कोहनी मारते हुए बोली, "बच गए आज तो...।"

बच्चों ने अब तक बस्तों में से गणित की किताबें नहीं निकाली थीं।

कक्षा में सन्नाटा पसरा पड़ा था। बच्चों को डर था कि अगर वे शोर करेंगे, तो मास्साब आकर गणित पढ़ाना शुरू कर देंगे। तो इसकी बजाय कुछ बच्चे अपनी कॉपियों के पीछे के पन्नों पर चित्र बनाने लग गए, कुछ कॉपी में से पन्नों को फाड़-फाड़कर अपनी पसन्द के खिलौने बनाने में जुट गए, तो कुछ अपने-अपने बस्तों में रखी *चकमक* पढ़ने लगे।

वहीं खाई की पाल की झाड़ियों में दुबका भागचन्द्र, पीरियड की घण्टी बजने का इन्तज़ार कर रहा था। उसने अपने आप से कहा, "अब तो गणित का पीरियड खत्म ही होने वाला होगा। विज्ञान की कक्षा शुरू होने से पहले ही पहुँच जाना चाहिए।"

जल्दी-से खाई पार करके भागचन्द्र स्कूल की तरफ दौड़ पड़ा। स्कूल के अन्दर घुसते वक्त उसे याद आया कि उसे तो पेट दर्द का नाटक करना था। यह सोचकर, चेहरे पर उदासी के भाव लाकर, वह अपनी रफ्तार धीमी कर चुका था। उसने मन-ही-मन तय किया कि अगर मास्साब ने पूछ लिया तो सचमुच ऐसा लगना चाहिए कि उसके पेट में दर्द हो रहा हो। इसीलिए वह अपने पेट को पकड़े हुए झुककर चल रहा था।

भागचन्द्र ने कक्षा में घुसकर राहत की साँस ली क्योंकि स्कूल में घुसने के दौरान उसका किसी भी शिक्षक से सामना नहीं हुआ। बच्चे उसकी ओर व्यंग्यात्मक ढंग से देखते हुए मुस्करा रहे थे।

भागचन्द्र यह देखकर इसरार और नारंगी पर नाराज़ होते हुए बोला, "कर दी चुगली! मैं भी अब देख लूँगा।"

इसरार बोला, "नहीं रे..."

विज्ञान की कक्षा

विज्ञान का ठोका लगे पाँच मिनट बीत चुके थे। अब तक मास्साब कक्षा में नहीं पहुँचे थे। फिर भी बच्चे अपनी-अपनी टोलियों में बैठने की प्रक्रिया में लगे हुए थे। पिछले पाँच महीनों में, विज्ञान की कक्षा में बच्चों को टोलियों में बैठने की आदत पड़ चुकी थी। विज्ञान वाले मास्साब को कक्षा की ओर आते हुए देखकर सभी बच्चों के चेहरों पर खुशी की लहर दौड़ गई।

मास्साब, बिजली के तार और बल्ब वगैरह लिए, कक्षा की ओर कदम बढ़ा रहे थे। उन्होंने सामान टेबल पर रखते हुए बच्चों की ओर एक मुस्कान डाली। आज टोली नम्बर दो और तीन के कुछ बच्चे अनुपस्थित थे, इस वजह से दोनों टोलियों को मिलाकर पाँच बच्चों की एक टोली बनाई गई।

बिजली के तारों को सुलझाते हुए मास्साब बोले, "कौन-कौन सेल लाया है?" उन्होंने देखा कि दो टोलियों के बच्चे ही अपने घर से सेल लेकर आए थे। मास्साब ने दोनों टोलियों से सेल ले लिए, और उन्हें उलट-पलटकर

देखते हुए पूछा, "चालू तो हैं न?" फिर टोलियों को सेल लौटाते हुए पूछा, "बाकी लोग सेल क्यों नहीं लाए?"

कक्षा में चुप्पी थी। मास्साब सोच रहे थे कि हो सकता है बच्चों के घर पर टॉर्च न हो। या फिर घर के बड़ों ने मना कर दिया हो। मास्साब ने बिना किसी जवाब की उम्मीद किए, जिन टोलियों में सेल नहीं थे, उनको एक-एक सेल अपनी ओर से दे दिया। साथ ही, सभी टोलियों में दो-दो तार, एक-एक बल्ब और बल्ब होल्डर वितरित कर दिए।

मास्साब ने जैसे ही तार, होल्डर, बल्ब आदि टोलियों में वितरित किए कि बच्चे उनको उलटने-पलटने में लग गए। मास्साब का ध्यान एक टोली पर गया। वे मन-ही-मन मुस्कुराए कि बच्चों ने बल्ब को बिना होल्डर में फिट किए, सेल से जोड़कर जला लिया है। हालाँकि, वे थोड़ा झल्लाए, "तसल्ली तो रखो, इतनी भी क्या जल्दी पड़ी है!"

पर फिर मास्साब अपने आपको नियंत्रित कर सोचने लगे कि बच्चों ने गलत तो कुछ भी नहीं किया। उन्हें याद आया कि शिक्षक प्रशिक्षण में उनकी कक्षा में भी तो ऐसा ही माहौल हो जाया करता था। उनकी टोली के सदस्य भी तो इतनी ही जल्दी मचाते थे।

मास्साब अब शान्त थे। "तो चलो, बिजली का पाठ निकालो।" उन्होंने किताब से पाठ का पेज नम्बर खोलकर बच्चों से भी उसे खोलने को कहा।

शान्ति व धैर्य के मूड में आ चुके मास्साब ने एक बार फिर से सभी को शान्त रहने को कहा। मगर भागचन्द्र अभी भी बल्ब को जलाए ही जा रहा था। मास्साब भागचन्द्र के पास गए और झुककर उसके कन्धे पर हाथ रखते हुए बोले, "तुम्हें अलग-से कहना पड़ेगा?"

भागचन्द्र सोच रहा था कि वह तो चुप ही है। बस, बल्ब ही तो जला रहा है। सहमकर बोला, "जी, मास्साब...।" मास्साब बोर्ड की ओर जाते हुए बोले, "क्या 'जी-जी' लगा रखा है! अभी यह बल्ब जलाना बन्द करो और पाठ खोलो।"

भागचन्द्र बल्ब जलाने में इतना मशगूल था कि उसने सुना ही नहीं कि मास्साब ने कौन-सा पेज खोलने को कहा है। उसने पास की टोली वाले की विज्ञान की किताब में देखा और अपनी किताब में पाठ खोल लिया।

बच्चों का दोष?

मास्साब ने कहा, "चलो, पाठ के पहले पेज को पढ़ लो।" वे कक्षा में टहल रहे थे। बच्चे टोलियों में पढ़ने की कोशिश कर रहे थे।

कक्षा में शोर होने लगा। वजह यह

थी कि बच्चे ज़ोर-ज़ोर-से पढ़ रहे थे। मास्साब परेशान हो रहे थे कि आखिर ये मन-ही-मन में क्यों नहीं पढ़ते। मास्साब ने इस बारी भी धैर्य रखा और कक्षा में किसी से कुछ नहीं कहा। बच्चों की एक समस्या यह थी कि वे अक्षर-दर-अक्षर शब्द बनाकर पढ़ तो पाते थे, मगर पूरा वाक्य पढ़कर समझ नहीं पाते थे। मास्साब का ध्यान इस पर भी था कि बच्चे पढ़ते वक्त आखिर कर क्या रहे हैं। उन्होंने देखा कि बच्चे केवल हिज्जों को पढ़ते हैं। अर्थ तो दूर-दूर तक समझ में नहीं आ रहा है। हालाँकि कुछ अच्छा, उनकी पसन्द का हो, जिसमें बढ़िया चित्र हों, ऐसी किताब या पत्रिका को पढ़ने की कोशिश वे ज़रूर करते। *चकमक* उन पत्रिकाओं में से एक थी जो बच्चे अपनी मर्ज़ी से पढ़ते थे।

वैसे पढ़ने और पढ़कर समझने की यह समस्या इसी स्कूल के बच्चों की नहीं है। यह तो व्यापक समस्या रही है। मास्साब ने यह भी अनुभव किया कि बच्चों को मौखिक रूप में कोई बात कही जाए, तो वे बढ़िया-से समझ पाते हैं। इसी प्रकार से, अगर किताब में कुछ लिखा हुआ उनकी अपनी भाषा में बताया जाए, तो वे उसे अच्छे-से समझ लेते हैं। दूसरी बात जो मास्साब ने अनुभव की थी, वह यह कि बच्चों को अगर कोई प्रयोग करने का तरीका अच्छे-से बता दिया जाए, तो फिर वे उसे कर पाते हैं, मगर वे खुद पढ़कर, प्रयोग करने की क्षमता में निपुण नहीं हैं। इसकी वजह यही थी कि प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों को पढ़ने व पढ़कर समझने के अवसर नहीं मिले थे।

वैसे एक समय ऐसा था जब मास्साब और शिक्षक समुदाय के कई अन्य साथी ऐसा समझते थे कि बच्चे तो 'गधे' होते हैं; मगर मास्साब का बच्चों के प्रति यह नज़रिया ढीला पड़ता जा रहा था। हालाँकि, वे इस धारणा से पूरी तरह मुक्त तो नहीं हुए थे, मगर वे अब मानते लग रहे थे कि बच्चों के बारे में यह कहना – 'वे गलत हैं', 'उन्हें आता नहीं' – ठीक नहीं।

मास्साब ने जब विज्ञान शिक्षण का प्रशिक्षण प्रारम्भ किया था, तब अन्य स्कूलों के बाल विज्ञान के शिक्षक साथी भी गफलत में पड़ जाते। प्रयोग को स्रोत दल के द्वारा करते हुए देख या उनके द्वारा समझाने पर, शिक्षक साथी बढ़िया-से कर पाते थे। इसकी वजह यह थी कि मास्साब और अन्य साथियों में भी किसी प्रयोग को पढ़कर, प्रयोग करने का हुनर और आत्मविश्वास पैदा नहीं हुआ था। प्रशिक्षणों और मासिक बैठकों में बारम्बार इस प्रक्रिया से गुज़रने का ही परिणाम था, प्रयोग करने और सवाल करने की कला का विकसित होना।

अब मास्साब ने बच्चों पर दोषारोपण करना बन्द कर दिया था।

वे मानने लगे थे कि समस्या यह नहीं कि बच्चे पढ़ना सीख नहीं सकते। असल समस्या पढ़ना सिखाने के तरीकों में है।

सबीहा और टॉर्च

करीब पन्द्रह मिनट से बच्चे कक्षा में आलाप लेकर पढ़े जा रहे थे। मास्साब को लगा कि जो पाठ्य तीन-चार मिनट में पढ़ा जा सकता है, उसे पढ़ने में पन्द्रह मिनट भी कम पड़ रहे हैं। उन्होंने बच्चों को चुप कराया और पूछा, "क्या समझ में आया?" इस सवाल पर बच्चों में चुप्पी थी। मास्साब ने इस चुप्पी को तोड़ना उचित समझा। वे पाठ का पहला पेज खुद पढ़ने लगे, कुछ इस तरह कि मानो वे बच्चों को कहानी सुना रहे हों। दरअसल, *बाल विज्ञान* का यह पाठ कहानीनुमा ही था।

मास्साब बोर्ड के सामने खड़े होकर पढ़ते जा रहे थे – "सबीहा के अब्बा परेशान थे। बार-बार टॉर्च को ठीक कर रहे थे। साथ ही कुछ बड़बड़ा भी रहे थे। 'अरे, आज ही तो छुट्टन नए सेल डलवाकर लाया है। फिर क्या हो गया इस कमबख्त टॉर्च को!' यह सुनकर सबीहा चुपचाप उनके हाथ से टॉर्च ले आई और एक कोने में बैठकर उसकी जाँच करने लगी। मन-ही-मन सोचती भी गई – 'देखूँ, कहीं बल्ब तो फ्यूज़ नहीं हुआ। उफ, कैसी कसकर घुमाई है इसकी चूड़ी! हाँ, खुल गई। बल्ब निकालकर

देखूँ। बल्ब तो बाहर से ठीक ही लग रहा है। इसे वापस वैसे ही लगा देती हूँ। सेल? सेल तो नए डाले हैं। फिर भी देख लेती हूँ। अरे, ये क्या? एक सेल तो उलटा लगाया हुआ है। यह तो छुट्टन की ही करामात है।' "

जब पैराग्राफ में फ्यूज़ बल्ब का ज़िक्र आया तो कुछ बच्चे फ्यूज़ होने का अर्थ, टोलियों में दिए उस छोटे-से बल्ब में खोज रहे थे। मगर ये बल्ब तो मास्साब ने पहले से ही जाँच-परख कर टोलियों में उपलब्ध कराए थे।

पहला पैराग्राफ पढ़ा जा चुका था। मास्साब ने खुली हुई *बाल विज्ञान* की

किताब को टेबल पर उलटी रख, बच्चों की ओर मुस्कान बिखेरी और पूछा, "समझ में आया कि नहीं?"

बच्चों ने एक साथ कहा, "हाँ, मास्साब।"

मास्साब ने कहा, "चलो, तो आगे भी पढ़ लेते हैं।" उन्होंने एक पैराग्राफ और पढ़ा।

"दो मिनट में सबीहा ने लौटकर जलती हुई टॉर्च अब्बा के हाथ में थमाई। खुशी-से उन्होंने उसकी पीठ थपथपाई और तुरन्त टॉर्च लेकर बाहर निकल आए।"

इन दो पैराग्राफ के बाद, किताब का अगला पैराग्राफ बच्चों के अनुभवों को कक्षा का हिस्सा बनाने के विचार से रखा गया था। मास्साब ने किताब के तीसरे पैराग्राफ को हू-ब-हू न पढ़ते हुए, उस पर बातचीत करना उचित समझा। पहले उस पैराग्राफ को उन्होंने मन में ही एक साँस में पढ़ा, और फिर चर्चा प्रारम्भ की।

बातचीत में पढ़ना

मास्साब ने कुछ देर बाद कहा, "क्यों, समझ में आया...?"

रघु बैठे-बैठे ही बोला, "सबीहा के अब्बा परेशान थे।"

मास्साब ने पूछा, "क्यों परेशान थे?"

"मास्साब...टॉर्च नहीं जल रही थी उनकी।" रघु बोला।

"तो फिर क्या किया?" मास्साब ने पूछा।

अबकी बार नारंगी बोली, "सबीहा ने टॉर्च में सेल को सही जमा दिया।"

"कैसे जमा दिए?" मास्साब ने पूछा।

नारंगी हिम्मत करके बोली, "सही तरीके से जमा दिए।"

मास्साब ने फिर से पूछा, "तुम लोगों ने टॉर्च देखी है?"

मास्साब के इस सवाल पर लगभग सभी बच्चों के हाथ उठे हुए थे।

चन्दर बोला, "मास्साब, एक बार मेरे घर पर भी ऐसा ही हुआ था। मेरे घर पर टॉर्च में सेल गलत लगे थे तो मैंने उनको सही जमा दिए थे।"

मास्साब बोले, "वेरी गुड! टॉर्च को चालू करने के लिए सेल ठीक-से लगाना पड़ता है।"

बच्चों के साथ बातचीत के दौरान मास्साब ने एक और अवलोकन किया। 'बल्ब जलाओ जगमग-जगमग' वाले पाठ के कार्टूनों को बच्चे चटखारे ले-लेकर पढ़ रहे थे। मास्साब को एहसास हुआ कि उन्होंने अब तक किताब के किसी भी पाठ के कार्टून की ओर बच्चों का ध्यान नहीं दिलाया, मगर फिर भी वे कार्टूनों का आनन्द उठाते हैं। उन्हें खयाल आया कि हो सकता है बाकी पाठों के कार्टूनों को भी बच्चों ने पढ़ा होगा।

मास्साब कार्टून के खयाल से बाहर निकलकर टॉर्च वाली बात पर लौटे, "अच्छा, हमारे पास एक टॉर्च है। कल तुम अपने घर वालों से

पूछकर टॉर्च ज़रूर लेकर आना। कल हम देखेंगे कि टॉर्च कैसे काम करती है। पहले हम बल्ब जलाने का प्रयोग करते हैं।"

बल्ब कैसे जले?

मास्साब को एहसास हुआ कि जैसा किताब में लिखा है, वैसा-का-वैसा ही पढ़ने पर वक्त काफी लगेगा और हो सकता है कि बच्चों को बोरियत हो। इसलिए उन्होंने बच्चों से कहा, "चलो, हम पहले एक-एक करके समझ लेते हैं। पता है न, बल्ब को जलाने के लिए हमको क्या-क्या चाहिए?"

कक्षा में कई सारे हाथ उठ खड़े हुए। "मास्साब... मास्साब... मास्साब मैं... मास्साब... !" मास्साब को लगा कि सभी को बुनियादी बात पता है। फिर भी उन्होंने उचित समझा कि बच्चों की बात को सुना जाए। "कौन बताएगा पहले?"

एक टोली ने बताया, "तार, सेल, बल्ब।" लगभग सभी टोलियों के एक-से ही जवाब थे। बस, बताने के क्रम में फर्क था। भागचन्द्र अपनी पैंट को कमर के ऊपर खिसकाकर खड़ा हुआ। "एक बल्ब और ये चेन।" दरअसल, भागचन्द्र अपने गले में पहनी हुई चाँदी के रंग की चेन दिखा रहा था।

मास्साब सहित सभी बच्चे भागचन्द्र के इस जवाब पर हँस दिए। मास्साब ने भागचन्द्र की तरफ देखा और फिर बच्चों की ओर। वे बच्चों की प्रतिक्रिया का इन्तज़ार कर रहे थे।

नारंगी खड़ी होकर बोली, "हाँ, मास्साब! बल्ब जल गया था चेन से।"

दरअसल, अन्य टोलियों के बच्चे यह करतूत नहीं देख पाए थे। इसलिए वे असमंजस में थे कि क्या कहें - सही या गलत।

भागचन्द्र कभी मास्साब की ओर देखता, तो कभी टोलियों की ओर। उसे मन में डर लग रहा था कि कहीं चेन वाली बात गलत तो नहीं। उसे यह डर भी था कि कहीं खाई की पाल पर छिपने वाली बात कोई बता न दे।

मास्साब ने कहा, "भागचन्द्र ने कहा तो सही ही है। भई, उसने जब चेन को सेल से जोड़कर बल्ब जला दिया, तो फिर गलत तो नहीं।"

यह सुनकर भागचन्द्र गदगद हो गया। नारंगी को भी उतनी ही खुशी हो रही थी। आखिर उसने भी तो भागचन्द्र की बात का समर्थन किया था।

रघु बोला, "किताब में तो तार का कहा है।"

"हाँ... बिलकुल ठीक कहा तुमने। तार की जगह चेन को काम में लिया है भागचन्द्र ने।" मास्साब बोले। वे सोच रहे थे कि विज्ञान की यात्रा तो इसी तरह आगे बढ़ती है।

मास्साब ने एक पल को सोचा कि अब यहाँ पर बच्चों को बिजली के

प्रयोग करने के बारे में बुनियादी सावधानी बता ही दी जाए। “एक बात तुम सब ध्यान से सुन लो... हम बिजली के जितने भी प्रयोग करेंगे, वे सब सेल से ही करेंगे। इस वाली बिजली से नहीं।” उन्होंने कक्षा की दीवार की ओर इशारा करते हुए कहा। “कभी भी घर, दुकान या खेत के तारों में बहने वाली बिजली से प्रयोग मत करना।”

“लो... बिजली भी बहती है? बिजली कोई पानी थोड़े ही है!” केशव को बिजली के बहने वाली बात का भारी अचरज हो रहा था।

“चल, तो फिर तू बता – बिजली चलती है क्या?” रघु ने छूटते ही ताना मारा।

मास्साब दोनों की बहस सुन रहे थे। बच्चों के साथ-साथ मास्साब भी अचरज में पड़ गए थे। वयस्क मास्साब, बच्चों की ही माफिक सोच में डूबे हुए लग रहे थे। वे बीच में बोले, “तो कोई बात नहीं... तुम जो भी कहो। भई, हम तो बिजली का बहना ही बोलते हैं। बिजली तो तारों में बहती है। तुम क्या बोलते हो? तुम चाहो तो कह सकते हो कि तारों में बिजली चलती है। बात एक ही है।”

फिर मास्साब ने थोड़ा रुककर कहा, “सबको ये बात समझ में आ गई? देखो, भागचन्द्र ने जो प्रयोग किया, वह एकदम सही है। उसने चेन को तार की जगह पर इस्तेमाल किया है। इस बात का सम्बन्ध आगे ज़रूर आएगा।”

डमरू बोला, “मास्साब... चेन में बिजली बहती है।”

“हाँ, बिलकुल ठीक कहा तुमने। इस बात की भी हम जाँच करेंगे कि बिजली किन-किन चीज़ों में से बहती है। पर सबसे पहले बल्ब को जलाकर देखेंगे।”

तार, सेल, होल्डर और बल्ब

मास्साब को लगा कि शुरुआत बल्ब जलाने से करना ठीक होगा। आगे की कार्यवाही बाद में की जाए तो मज़ा बरकरार रहेगा, वरना बच्चे बोर हो सकते हैं। “चलो, पहले टोलियों में बल्ब जलाते हैं।”

टोलियाँ तारों के सिरों के प्लास्टिक को छीलने के बाद, उसे होल्डर में जोड़कर व बल्ब फिट कर, सेल से जोड़ने की तैयारी कर रही थीं। एक टोली को छोड़कर बाकी के

बल्ब जल चुके थे। इस टोली के बच्चे दोनों तारों के सिरों को सेल से जोड़कर, पूरी ताकत से दबा रहे थे। बोर्ड के पास खड़े होकर मास्साब ने टोली पर नज़र केन्द्रित की। "ज़ोर आज़माइश नहीं, ज़रा बल्ब को होल्डर में ढंग से फिट करो।"

टोली ने ऐसा ही किया मगर फिर भी बल्ब नहीं जल रहा था। पास में बैठा चन्दर धीरे-से बोला, "अरे, होल्डर के तार गलत लगे हैं।"

मास्साब को पहले तो लगा कि चन्दर कोई हरकत कर रहा है। उन्हें पास आता देख, चन्दर अपनी टोली की ओर खिसक गया।

"हाँ, क्या कह रहे थे तुम इस टोली से?"

"मास्साब... होल्डर में तार गलत लगे हैं।" चन्दर वहीं से दुबककर बोला।

मास्साब ने देखा कि सचमुच टोली ने होल्डर के एक ही सिरे से दोनों तारों के सिरों को जोड़ दिया है। इस कारण से बल्ब नहीं जल रहा है। दरअसल, चन्दर सही कह रहा था।

नहीं! सेल के दोनों सिरों को सीधे तार से कभी मत जोड़ना सेल खराब हो जाएगा।

"वेरी गुड! देखो, ज़रा मदद करो इस टोली की।" चन्दर को मदद करने का कहकर, मास्साब वापस पलटकर बोर्ड की ओर चले गए। उन्होंने बोर्ड के पास पहुँचकर पलटकर देखा कि उस टोली में बल्ब जल चुका है। अब सभी टोलियों में बल्ब जल रहे थे।

परिपथ

"तो बल्ब तो जल गए, मगर बल्ब जलाने के लिए कुछ बातों का ध्यान रखना होगा। अच्छा, तो अब बताओ कि बल्ब कैसे जलता है?" मास्साब ने पूछा।

"मास्साब, सेल से जोड़ने पर।" विष्णु ने कहा।

"हाँ..." मास्साब बोले जा रहे थे, "बल्ब तभी जलेगा जब सेल से तारों में बिजली बह रही हो। सेल जलने का मतलब हुआ कि 'परिपथ' पूरा है। अगर परिपथ अधूरा या गलत है, तो सेल नहीं जलेगा।"

बच्चे मास्साब के चेहरे की ओर ऐसे देख रहे थे मानो परिपथ का अर्थ उनके चेहरे पर ही मिल जाए। मास्साब हकबका गए, "तो समझ में आया कि नहीं?"

बच्चों ने 'हाँ' में सिर तो हिलाया मगर मास्साब को एहसास हुआ कि

वे परिपथ का अर्थ नहीं समझ पाए हैं। मास्साब ने अबकी बार समझाने का दूसरा तरीका चुना, "अच्छा, तो समझ लो, बल्ब को जब तारों के ज़रिए सेल से जोड़ते हैं, तो इसको परिपथ कहते हैं। ...समझो कि परिपथ मतलब बिजली बहने का रास्ता।"

मास्साब बोर्ड की ओर मुड़े और टेबल पर से चॉक उठाकर परिपथ का चित्र बनाया। परिपथ का जो चित्र मास्साब ने बोर्ड पर बनाया था, उसमें सेल, तार, बल्ब सबकुछ हू-ब-हू दर्शाए गए थे। परिपथ का सांकेतिक चित्र अभी बच्चों की समझ से कोसों दूर था। मास्साब का लक्ष्य था कि वे आगे चलकर परिपथ के सांकेतिक चित्र तक पहुँचें।

"अच्छा, बताओ इसमें बल्ब जलेगा न?"

बच्चों ने कहा, "हाँ, जलेगा।"

"तो यह जो चित्र बनाया है, इसे परिपथ कहते हैं। अगर इसमें से एक तार को सेल या बल्ब होल्डर से हटा दें, तो बल्ब जलेगा या नहीं?"

बच्चों ने 'नहीं' में जवाब दिया।

"तो यही परिपथ है। इसको अँग्रेज़ी में 'सर्किट' भी कहते हैं। जब बल्ब जल रहा है तो सर्किट पूरा या चालू है। बल्ब नहीं जल रहा हो, तो सर्किट अधूरा है। तो अब बताओ कि किताब में जो सर्किट के चित्र बने हैं, उनमें कौन-कौन-से पूरे हैं?" मास्साब ने किताब का पन्ना पलटा और टोलियों

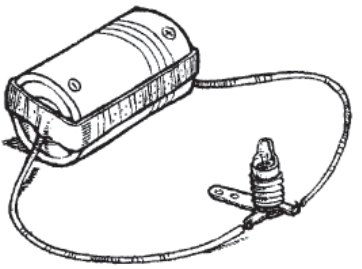

को दिखाते हुए निर्देश दिए, "अच्छा, इन चित्रों को ध्यान-से देखो। अब बताओ कि किस-किस सर्किट में बल्ब जलेगा और किसमें नहीं जलेगा?"

टोलियाँ चित्रों को देखने में लगी हुई थीं। बच्चे किताब में चित्र के पास ही, बल्ब जलने वाले के सामने सही और न जलने वाले के सामने गलत का निशान लगा रहे थे। इसके बाद सामूहिक चर्चा प्रारम्भ हुई।

"तो बताओ चित्र में मन्नू, गोलू, मीना, छुट्टन और गुड़िया के बल्बों में से किसके जलेंगे?"

दरअसल, *बाल वैज्ञानिक* के इस अध्याय में परिपथ के चित्र इस तरह से प्रस्तुत किए गए थे कि मानो बच्चों के द्वारा बनाए गए परिपथ हों।

टोली नम्बर एक से शुरुआत करते हुए मास्साब ने पूछा, "हो गया हो, तो बताओ।" टोली नम्बर एक ने कोई जवाब नहीं दिया तो मास्साब ने दूसरी टोली से पूछा।

विष्णु उठकर बोला, "मन्नू का बल्ब।"

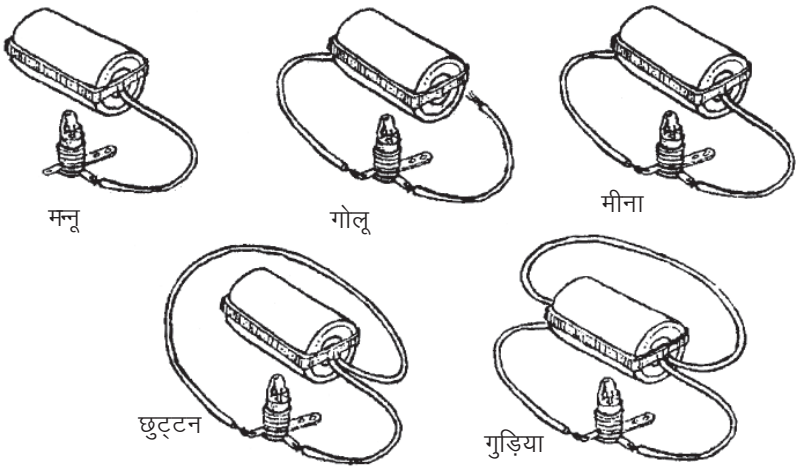

नारंगी खड़ी होकर बोली, "मीना और छुट्टन। ...मन्नू के बल्ब में तो एक ही तार लगा है।"

रघु बोला, "गोलू के सर्किट में तार तो दो लगे हैं, पर तार सेल से नहीं लगा हुआ है। तार को सेल से लगा दें तो बल्ब जल जाएगा।"

"और गुड़िया का बल्ब जलेगा या नहीं?" मास्साब गम्भीर होते हुए बोले।

नारंगी बोली, "मास्साब... करके देख लेते हैं।"

"हाँ, ये बात अच्छी कही। करके देखना ठीक होगा।" मास्साब का यह रुख बच्चों का हौसला बढ़ाने में मददगार बन गया था। बच्चों को एहसास हो रहा था कि मास्साब उनके साथ हैं।

"अच्छा, अब पीरियड खत्म होने वाला है। ऐसा करते हैं कि ये वाला प्रयोग कल करके देखते हैं।"

गुड़िया वाला सर्किट

स्कूल की छुट्टी हो चुकी थी। बच्चे अपने घर को जा चुके थे। घर जाकर गुड़िया वाले सर्किट के बारे में ही सोच रहे थे। दरअसल, किताब में गुड़िया वाले सर्किट के चित्र में बल्ब और तारों का जुड़ाव तो बराबर था, मगर एक अन्य तार सेल के दोनों सिरों को छुआकर दिखाया गया था। इस तार का एक सिरा सेल के धन

सिरे से और दूसरा सिरा सेल के ऋण सिरे से जोड़ा गया था।

रघु को घर में टाल-मटोल करते हुए देख, उसकी माँ ने पूछा, "क्या खटर-पटर कर रहा है?"

रघु ने जवाब दिया, "...बस ऐसे ही।"

"कुछ तो ढूँढ़ रहा है। फिर बताता क्यों नहीं?" माँ ने ज़ोर देकर पूछा।

"टॉर्च...।"

"टॉर्च तो तेरा बड़ा दादा ले गया है।"

* * *

नारंगी ने घर पहुँचकर तय किया कि गुड़िया वाले बल्ब का परिपथ बनाकर देखना चाहिए। नारंगी ने अपने घर पर टॉर्च में से सेल और बल्ब निकाल लिए थे। हालाँकि, बल्ब निकालने के चक्कर में टॉर्च के आगे के ढक्कन में से काँच और रबर की चूड़ी अलग होकर बिखर चुकी थी। उसने काँच और चूड़ी को यह सोचकर सँभालकर रख दिया कि प्रयोग के बाद वह इसे किसी तरह से फिट तो कर ही सकेगी।

नारंगी ने एक बार फिर से किताब का बिजली वाला पाठ खोला और समझने की कोशिश करने लगी कि आखिर करना क्या है। उसने चित्र में देखा कि एक परिपथ बनाना है। फिर एक अन्य तार लेकर, उसके दोनों सिरों को सेल से जोड़ना है। उसे याद आया कि मास्साब ने सावधान किया था, और चित्र में भी दिखाया गया था, कि अगर तार को इस तरह से जोड़ेंगे तो सेल खराब हो जाएगा। मगर बिना किए तो किताब में दर्शाए गुड़िया के बल्ब का पता नहीं चल सकता न!

नारंगी को टॉर्च तो मिल गई थी, मगर उसके सामने असल समस्या थी तार की। उसने घर में प्लास्टिक चढ़ा तार ढूँढ़ने की सोची। फिर उसे खयाल आया कि घर में तार का क्या काम। कभी बापू लाए ही नहीं, तो ढूँढ़े क्यों। नारंगी जुगाड़ जमाने की कोशिश कर रही थी कि तार के बदले में और क्या चीज़ काम आ सकती है। उसे अपने गले में पहनी हुई माला का खयाल आया, मगर उसने यह समझने में देरी नहीं की कि इसमें तार तो प्लास्टिक का है। तभी उसे खयाल आया कि लोहे का तार इसके लिए ठीक होगा।

नारंगी दौड़कर घर के पिछवाड़े में गई और लोहे का कोई हाथ-भर का तार ले आई। तार को मोड़कर तोड़ने की कोशिश की, मगर वह ऐसा नहीं कर सकी। लोहे का तार कड़ा जो था। उसने तार पर हाथ घुमाया तो पाया कि उसकी सतह बेहद खुरदुरी है। दरअसल, तार में ज़ंग लग चुका था। उसे खयाल आया कि तार के सिरों को रगड़ देना चाहिए। उसने तार के सिरों को पत्थर पर रगड़-रगड़कर चमका दिया। जब कड़े तार से सेल और बल्ब को जोड़ने लगी तो

वह एक अन्य दिक्कत का सामना कर रही थी। पहले तो उसने सेल को एक हाथ से पकड़ने की कोशिश की, मगर वे फिसल जाते। उसको महसूस हो रहा था कि अगर उसका कोई साथी होता तो इस प्रयोग को करने में आसानी होती। उसे अपनी बहन की याद आई, मगर वह तो बाहर खेलने गई हुई थी। वरना वह सेल को पकड़ने में अपनी बहन की मदद तो ले ही सकती थी। फिर वह एक और सोच में पड़ गई। अगर स्कूल में यह प्रयोग करते तो उसकी टोली के साथी मिलकर इस कड़े तार से भी बल्ब जला पाते। वह सोच रही थी कि स्कूल की टोली में तो उसके दोस्त होते।

स्कूल में बच्चों को विज्ञान विषय में टोलियों में काम करना होता था। चार-चार की टोलियों में पूरी कक्षा के बच्चे बँट जाते, और फिर वे सारे काम मिल-बाँटकर करते। टोलियों में बच्चे एक-दूसरे से चर्चा करते, साथ-साथ प्रयोग करते। जब प्रयोग किया जाता तो टोली के चारों बच्चे मिलकर उसे पूरा करते। और जब प्रयोग के निष्कर्ष निकालने होते, तो टोली मिलकर उस पर चर्चा करती। टोली की अवधारणा पर विज्ञान में काफी ज़ोर दिया गया था।

इतने में माँ की आवाज़ नारंगी के कानों में पड़ी और उसने कहा, "आई।"

बिजली किसमें बहती?

अगले दिन स्कूल में विज्ञान के पीरियड के लिए बच्चे उतावले हुए जा रहे थे। कक्षा में बच्चे मास्साब के आने का इन्तज़ार कर रहे थे। मास्साब जब बिजली के तार और बल्ब वगैरह लेकर कक्षा की ओर आ रहे थे, तो स्कूल के अन्य शिक्षक उनकी ओर देख, हँसते हुए बोले, "आज फिर से कबाड़ से जुगाड़ होने वाला है।" हालाँकि, मास्साब ने सुन लिया था, मगर वे चुप रहे। उन्होंने सोचा, 'ठीक ही तो कह रहे हैं। कबाड़ का जुगाड़ करने ही तो जा रहा हूँ।'

मास्साब के कक्षा में घुसते ही बच्चे उठ खड़े हुए। दो बच्चों ने आगे बढ़कर मास्साब के हाथों में से किट का सामान लेकर टेबल पर रख दिया। टोलियों में अभी मास्साब ने किट-सामग्री नहीं दी थी। बच्चे उतावले हुए जा रहे थे कि मास्साब सामान दें और वे प्रयोग शुरू करें।

मास्साब ने आज एक नया प्रयोग करने के निर्देश दिए। ब्लैक-बोर्ड पर मास्साब तालिका बनाते-बनाते बोल रहे थे, "आज हम पता करेंगे कि किन-किन चीज़ों में से बिजली बहती है और किनमें से नहीं। इस बात का पता कैसे चलेगा कि किसमें से बिजली बहती है?" टोली में बैठे अधिकांश बच्चे कॉपी में तालिका बनाने की कोशिश कर रहे थे।

मास्साब ने सवाल एक बार फिर

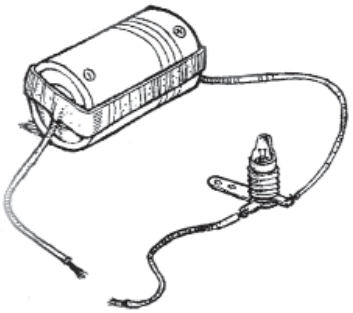

से दोहराया, “परिपथ में बिजली बह रही है, इस बात को कैसे जाँचोगे?”

इसरार को कुछ सूझा नहीं और बोल पड़ा, “कर के।”

मास्साब कुछ बोले नहीं तो इसरार को एहसास हुआ कि शायद उसका यह जवाब मास्साब को ठीक नहीं लगा। बच्चे सोच में पड़ गए थे।

नारंगी बोली, “बल्ब जलाकर।”

मास्साब बोले, “शाबाश... वेरी गुड! तो, परिपथ में बल्ब जल रहा है, इसका मतलब उसमें बिजली बह रही है।”

मास्साब ने बच्चों को सामान देकर कहा, “चलो, अब कल जैसे ही सेल और बल्ब को जोड़कर परिपथ बना लो। आज एक काम यह करना कि बल्ब और सेल के बीच में एक तार ज़्यादा जोड़ना।”

बच्चों को मास्साब की बात समझ में नहीं आई। मास्साब ने अबकी बार बच्चों को किताब में बने चित्र को देखने के लिए कहा। बच्चों ने चित्र के अनुसार सेल, तार और बल्बों को जोड़कर परिपथ बना लिया।

अब वे सेल और बल्ब के बीच के दो तारों के बीच बारी-बारी से कील, प्लास्टिक की पन्नी, ब्लेड, कागज़, धागा, काँच, रबर, कपड़ा, चॉक वगैरह को रख-रखकर जाँच रहे थे कि बिजली किन-किन वस्तुओं से होकर बहती है।

लगभग सभी टोलियों ने प्रयोग करके अपने निष्कर्ष तालिका में लिख लिए थे। दरअसल, बच्चों को प्रयोग करने की बजाय निष्कर्षों को लिखने में ज़्यादा वक्त लग रहा था।

अब सामूहिक चर्चा की बारी थी। बोर्ड पर बनी तालिका में मास्साब ने वे नाम लिख दिए जो बच्चों ने अपनी मर्ज़ी से प्रयोग के लिए चुने थे।

टोली नम्बर तीन ने कहा, "पेंसिल सुचालक है।" जबकि टोली नम्बर चार कह रही थी, "पेंसिल कुचालक है।"

सुचालक-कुचालक पेंसिल

मास्साब कक्षा के कोने में खड़े होकर बच्चों की चर्चा को सुन रहे थे। वे कुछ देर बाद, अपनी झबरीली, सफेद-काली खिचड़ी मूँछों में से मुस्कुराते हुए बोले, "तो क्या करें? एक कह रहा है कि सुचालक और दूसरा कुचालक। ...अच्छा, तो तुम दोनों टोली वाले सभी के सामने फिर से प्रयोग करके दिखाओ। अभी दूध-का-दूध और पानी-का-पानी हो जाएगा।"

अब की बार दोनों टोली के बच्चे मास्साब की टेबल पर सेल, तार वगैरह लेकर आ गए थे। दोनों टोलियों ने बारी-बारी से प्रयोग किया, और दोनों ही टोलियाँ अपनी-अपनी जगह पर सही थीं।

"तो समझ में आया कि असल बात क्या है?" मास्साब ने बात को आगे बढ़ाया, "अच्छा... ये बताओ कि लकड़ी कुचालक है या सुचालक?"

तालिका

क्र.	चीज़	चालक है	कुचालक है
1.	लोहे की कील		
2.	काँच की पट्टी		
3.	चॉक		
4.	पचास पैसे का सिक्का		
5.	सूती धागा/कपड़ा		
6.	कागज़		
7.	चाँदी की बाली		
8.	.....		
9.	.....		

तीन-चार बच्चों ने एक साथ कहा, "कुचालक।"

"अच्छा! तो टोली नम्बर तीन ने कैसी पेंसिल ली है?"

पेंसिल को मास्साब ने हाथ में पकड़कर दिखाया, तो बच्चों ने पाया कि वह दोनों सिरों पर छिली हुई थी। जब प्रयोग किया जा रहा था तो पेंसिल के अन्दर की काले-भूरे रंग की चीज़ से तारों को छुआ जा रहा था। जबकि टोली नम्बर चार ने बिना छिली हुई पेंसिल के साथ प्रयोग किया था।

मास्साब ने टोलियों को अपनी-अपनी जगह पर बैठने का इशारा करते हुए कहा, "तो बात समझ में आई? पेंसिल को छीलकर, उसके अन्दर की काले रंग की चीज़ से तारों को छुआते हैं, तो बल्ब जलता तो है मगर काफी कम रोशनी देता है।"

अबकी बार सभी टोलियों ने लकड़ी की पेंसिल को छीलकर, उसके अन्दर मौजूद कार्बन की पतली-सी रॉड को तारों से छुआकर देखा। कुछ टोलियों ने एक से ज़्यादा सेल लगाकर प्रयोग किया। बच्चों के लिए पेंसिल को परिपथ में जोड़कर बल्ब जलाने की घटना, एकदम नई बात थी।

हवा और बिजली

इसके बाद मास्साब एक अन्य समस्या टोलियों के सामने रखने की तैयारी में थे। उन्होंने बच्चों से पूछा, "हवा में से बिजली बहती है कि नहीं? कौन बताएगा?"

रघु ने कोहनी से भागचन्द्र को इशारा किया, "हवा... हवा को सेल और बल्ब से कैसे जोड़ेंगे?"

भागचन्द्र फुसफुसाया, "मैं भी यही सोच रहा हूँ।"

मास्साब बच्चों को सोचने के लिए प्रेरित कर रहे थे, "सोचो, सोचो..."

मास्साब अब टोलियों की प्रतिक्रिया का इन्तज़ार कर रहे थे कि बच्चे कोई सवाल करें। बच्चों के मन में कुछ चल रहा था। नारंगी अपने बालों की लट को उँगली में लपेटे, सोच में डूबी हुई थी, 'हवा को तो देखा भी नहीं। फिर हवा कोई ऐसी चीज़ तो नहीं कि उसको पकड़ लें। मास्साब ने ये सवाल पूछा क्यों? ऐसा कोई प्रयोग ज़रूर होगा जिससे हवा को परिपथ में जोड़कर जाँच सकें...'

"प्रयोग कैसे करेंगे हवा का?" नारंगी ने पूछा।

मास्साब पहेलीनुमा अन्दाज़ में बोले, "अरे, प्रयोग तो तुम सब लोग कर चुके हो अब तक। अभी-अभी तो तुमने इस प्रयोग को किया। सोचो, सोचो, सोचो..." बच्चों को चुप देख मास्साब फिर बोले, "अरे भई, हवा कोई रबर, पेंसिल या लोहे की कील तो नहीं कि पकड़ लिया हाथ में!"

कक्षा में बच्चे विचारों में डुबकी लगा रहे थे। भागचन्द्र बोला, "मास्साब,

हवा में से अगर बिजली बहती तो फिर तो बल्ब जल जाता।"

भागचन्द्र का जवाब सुनकर मास्साब की आँखों में चमक आ गई, "हाँ, बात तो सही है। अब भी प्रयोग का ध्यान नहीं आया? अच्छा, सोचो कि जब तुमने सेल और तारों को जोड़कर परिपथ बनाया तो क्या दो तारों के सिरे खुले हुए थे?"

बच्चों ने कहा, "हाँ, मास्साब।"

"जब तारों के सिरे खुले हुए थे, तो क्या बल्ब जल रहा था?"

"नहीं।" बच्चों का यह सामूहिक जवाब था।

मास्साब, "क्यों?"

"क्योंकि बिजली नहीं बह रही थी।"

"अच्छा, अब यह बताओ कि खुले हुए तारों के बीच क्या कोई चीज़ है?"

बच्चे फिर से सोच में डूब गए। "कुछ नहीं।" उन्होंने कहा।

"सोच लो..." मास्साब ने पहेलीनुमा अन्दाज़ में एक बार फिर से कहा। बच्चों को कुछ सूझ नहीं रहा था। मगर सोच ज़रूर रहे थे। दरअसल, वे जूझ रहे थे।

नारंगी हिम्मत करके बोली, "मास्साब... हवा है।"

"वाह! तो वहाँ हवा है। तो यह कुचालक हुई या चालक?"

नारंगी बोली, "चालक..." उसने अपने मुँह को दोनों हाथों से छुपा लिया और बोली, "नहीं-नहीं... कुचालक।"

मास्साब सोच रहे थे कि हवा वाली बात अब तक सभी बच्चों को समझ में नहीं आई है। अबकी बार वे बच्चों के बीच बैठ गए, और एक सर्किट बनाकर बच्चों से पूछने लगे, "दो तारों को जोड़ा और यह बल्ब जल गया। ये तार जुड़ गए तो सर्किट पूरा हो गया। अब मैं इन तारों को अलग-अलग कर रहा हूँ। ...क्या हुआ? बल्ब बन्द हो गया। तो तार के इन दोनों सिरों के बीच क्या है? हवा है न!"

बच्चों को समझ में आ रहा था। वे बोले, "अच्छा... अब समझ में आ गया।"

नारंगी अब अन्दर-ही-अन्दर कुलबुला रही थी। उसे एहसास हो रहा था कि शायद मास्साब गुड़िया वाले परिपथ की बात भूल गए हैं। सो उसने कहा, "मास्साब... वो गुड़िया वाला सर्किट?"

मास्साब बच्चों के बीच में से खड़े होते हुए बोले, "अरे हाँ, अच्छा याद दिलाया। ...क्या तुम सोच पाए?"

विष्णु ने पूछा, "मास्साब, करके देख लें?"

मास्साब बोले, "हाँ, यह ठीक होगा।"

साथ-साथ कितने हाथ?

मास्साब कक्षा से जा चुके थे। बच्चों की टोलियाँ बिखर चुकी थीं।

मगर वे गुड़िया वाले परिपथ को बनाना चाह रहे थे। इसलिए उन्होंने बिजली का सामान अभी अलमारी में नहीं रखा था।

बच्चे परिपथ बनाने में जुटे हुए थे। नारंगी को याद आया कि घर पर जब वह अकेली इस प्रयोग को करने की कोशिश कर रही थी, तो उसको दिक्कत हो रही थी। दिक्कत इस बात की हो रही थी कि उसके दो ही हाथ थे। भले ही टोलियाँ बिखर चुकी थीं, मगर बच्चे टोलीनुमा समूहों में बैठकर इस प्रयोग को करने में जुटे हुए थे। प्रयोग को सेट करने के साथ-साथ उनमें आपस में शर्त भी लगाई जा रही थी। एक कह रहा था कि बल्ब जलेगा, तो दूसरा कह रहा था कि बल्ब नहीं जलेगा।

बच्चे दो अलग-अलग समूहों में प्रयोग करके देख चुके थे। और दिलचस्प बात यह थी कि दोनों समूहों के निष्कर्ष एक-जैसे ही थे।

...जारी

कालू राम शर्मा (1961-2021): अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, खरगोन में कार्यरत थे। स्कूली शिक्षा पर निरन्तर लेखन किया। फोटोग्राफी में दिलचस्पी। *एकलव्य* के शुरुआती दौर में धार एवं उज्जैन के केन्द्रों को स्थापित करने एवं मालवा में विज्ञान शिक्षण को फैलाने में अहम भूमिका निभाई।

प्रथम चित्र: कैरन हैडॉक: पिछले तीस सालों से भारत में शिक्षाविद, चित्रकार और शिक्षक के रूप में काम कर रही हैं। बहुत-सी चित्रकथाओं, पाठ्यपुस्तकों और अन्य पठन सामग्रियों का सृजन किया है और उनमें चित्र बनाए हैं।

सभी चित्र: रंजित बालमुचु: चित्रकारी व ग्राफिक डिज़ाइनिंग करते हैं, इस कोशिश में कि वह समाज के लिए अर्थपूर्ण हो सके। चाईबासा, झारखण्ड में रहते हैं।

सभी चित्र होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम के तहत विकसित *बाल वैज्ञानिक* कार्य पुस्तिकाओं से लिए गए हैं।

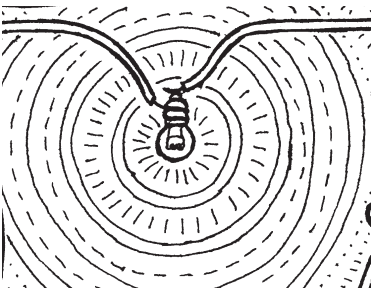

सरकारी स्कूलों में विज्ञान को बेहतर और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से पढ़ाने की सम्भावना को साकार करने के लिए शुरू किया गया 'होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम' (होविशिका) देश के शैक्षणिक इतिहास की एक मानीखेज़ परिघटना है। सन् 1972 में शुरू किया गया यह कार्यक्रम, सन् 2002 में बन्द होने के समय तक, मध्य प्रदेश के सैंकड़ों स्कूलों में चल रहा था। बच्चों के परिवेश को ध्यान में रखते हुए बनाए गए इस कार्यक्रम में विज्ञान को पढ़कर सीखने की बजाय उसे करके सीखने पर ज़ोर था। ज्ञान की दुनिया और बच्चों की दुनिया के बीच के कृत्रिम विभाजन पर आधारित शिक्षण-मूल्यांकन के घिसे-पिटे तौर-तरीकों से अलग हटकर, कार्यक्रम में सीखने-सिखाने से लेकर मूल्यांकन तक में कई नवाचार किए गए। इसी ज़मीन पर आगे चलकर 'एकलव्य' का सामाजिक अध्ययन कार्यक्रम भी खड़ा हुआ। होविशिका के 50 साल पूरे होने के मौके पर 'एकलव्य' के शुरुआती दौर में प्रकाशित दो किताबें एक नए रूप में...

इतिहास क्या है?
लेखकः सी.एन. सुब्रह्मण्यम
मूल्यः ₹ 36/-

विज्ञान क्या है?
लेखकः विनोद रायना व डी.पी. सिंह
मूल्यः ₹ 40/-

ऑर्डर करने के लिए सम्पर्क करें
फोन +91 755 297 7770-71-72; ईमेल pitara@eklavya.in
www.eklavya.in | www.pitarakart.in

पुवितम में विज्ञान: ज़िन्दगी से सीखना

मीनाक्षी उमेश

तमिल में पुवितम का मतलब 'धरती से प्रेम' होता है। पुवितम गतिविधि केन्द्र में बच्चे अपने आसपास के माहौल में सहजता से अवलोकन करना, खोजबीन करना और काम करना सीखते हैं। यह पद्धति विज्ञान सीखने पर किस तरह असर करती है? और शिक्षक इस प्रक्रिया में क्या भूमिका निभाते हैं?

विज्ञान का विकास प्रेक्षित घटनाओं के अवलोकन से निगमन द्वारा अज्ञात तथ्यों तक पहुँचने की प्रक्रिया के रूप में हुआ। अलबत्ता, आजकल विज्ञान अक्सर चारदीवारी में सिमटी कक्षा में पढ़ाया जाता है। बच्चों को अक्सर न तो अवलोकन का वक्त दिया जाता है और न ही पाठ्यपुस्तकों की अवधारणाओं को वास्तविक दुनिया के अपने अनुभवों से जोड़ने का मौका मिलता है। अगर बच्चे अपने स्वाभाविक परिवेश में रोज़मर्रा की जाँच-पड़ताल से विज्ञान सीखें तो कैसा रहे?

दिमाग और हाथों को जोड़ना

पुवितम में हम वैज्ञानिक सिद्धान्तों को स्कूल और स्कूल के इर्द-गिर्द के काम करके खोजते-परखते हैं (बॉक्स 1)। मसलन, पुवितम में रख-

बॉक्स 1: पुवितम गतिविधि केन्द्र का वैचारिक मर्म

सीखने की इच्छा न हो तो सीखने की गुंजाइश ही नहीं। सीखना स्वाभाविक प्रक्रिया है। कोई भी बच्चा अपने आसपास के माहौल, घटनाओं, प्रक्रियाओं और उनमें शामिल व्यक्तियों के अवलोकन से सीखता है। बच्चे वे नहीं सीखते जो हम उन्हें पढ़ाते हैं, वे उससे सीखते हैं जैसा हम आचरण करते हैं। शिक्षक अपनी जीवन शैली से प्रेरित करता है। इसीलिए, पुवितम के सारे वयस्क बच्चों, पृथ्वी और जीव-जगत का आदर करने के दर्शन का पालन करते हैं। उनका जीने का तरीका पृथ्वी के प्रति प्रेम के अनुरूप होता है। इसमें भौतिक वस्तुओं का न्यूनतम उपभोग, कचरा रीसाइकल करना एवं श्रम की गरिमा को महत्व देने की प्रतिबद्धता शामिल है। इसका मतलब है कि उन्हें तुच्छ समझे जाने वाले कामों जैसे कक्षा की सफाई करने या कूड़ा उठाने में कोई झिझक नहीं होती है।

हमने 3, 4 एवं 5 साल के बच्चों को पहले स्तर, 6 एवं 7 साल के बच्चों को दूसरे स्तर, 8 एवं 9 साल के बच्चों को तीसरे स्तर और 10 एवं 11 साल के बच्चों को चौथे स्तर में बाँटा है। इससे अलग-अलग आयु वर्ग के बच्चों को मिल-जुलकर सीखने का मौका मिलता है, और शिक्षकों को बड़े बच्चों की मदद भी मिल जाती है। चूँकि बच्चों की 'विषय' आधारित शिक्षा उनके 12 साल के होने के बाद ही शुरू होती है इसीलिए हमने इससे छोटे बच्चों के लिए एकीकृत ढंग से सीखने की पाठ्यचर्या तैयार की है। यह पाठ्यचर्या पाँच तत्वों, 'सूरज, पानी, धरती, हवा और आकाश' पर आधारित है। हम कहानियाँ और गाने लिखते हैं जिनसे बच्चों को प्राकृतिक परिघटना के अवलोकन करने, सवाल करने तथा अपने सवालों के जवाबों तक पहुँचने और इन तत्वों से सम्बन्धित अवधारणाओं को समझने में सहूलियत होती है।

एक निर्धारित शिक्षण पद्धति की बजाय पुवितम बच्चों की बात ध्यान-से सुनने, और प्राकृतिक दुनिया के सहज अन्वेषण पर केन्द्रित है। मेरे हिसाब से यह बच्चों के साथ होने का एकमात्र सही तरीका है। इसकी विशेषता यह होती है कि बच्चा अगुआई करता है और वयस्क अनुसरण करते हैं। यदि वयस्क कभी कोई मार्गदर्शन करते भी हैं तो वह उनकी निजी समझ से करते हैं जिसे उन्होंने अपने जीवन के अनुभवों से सीखा है।

रखाव का सारा काम शिक्षकों द्वारा बच्चों की मदद से किया जाता है। हम अपनी सब्ज़ियाँ खुद उगाते हैं, अपना खाना खुद पकाते हैं और खुद ही अपना नाश्ता भी बनाते हैं। रोज़मर्रा के कामों में यह सहभागिता, बच्चों और बड़ों, दोनों को प्राकृतिक परिघटनाओं का अवलोकन करने के कई मौके देती है। मसलन, बगीचों की देखभाल में खुदाई करने के लिए सब्बल, कटाई के लिए दस्ती-कैंची और पानी निकालने के लिए घिरनी

और पेडल पम्प का इस्तेमाल शामिल होता है (चित्र 1)। इन औज़ारों के इस्तेमाल से बच्चे सरल मशीन वाले पाठ के साथ व्यावहारिक ढंग से जुड़ पाते हैं जिससे उन्हें अवधारणाएँ और उससे सम्बन्धित सूत्रों को याद रखने में आसानी होती है। इसी तरह हर बच्चा छत पर लगी टंकी में पर्याप्त पानी भरने के लिए हर रोज़ 10 मिनट पेडल पम्प चलाता है, इसमें किसी भी तरह की खराबी आने पर उन्हें यह देखने का मौका मिलता है कि गड़बड़ी कहाँ हुई है। पम्प में आई खराबी का कारण पता लगाते हुए बच्चे यह समझ बना लेते हैं कि सामान्यत: पम्प काम कैसे करते हैं। खाना पकाने या साबुन बनाने और फूल, पौधों और बीजों से जैविक रंग बनाने जैसी गतिविधियाँ कई रोचक रासायनिक परिवर्तनों को समझने का मौका देती हैं। जैसे ओवन में केक के घोल का केक में बदलना, ऊष्मा से गर्म तेल में पूड़ी या तवे पर रोटी का फूलना, या अलग-अलग चीज़ें मिलाने पर खाने के स्वाद का बदलना। इसी तरह, अगर एक बार बच्चे समझ जाएँ कि पौधों से रंग कैसे बनते हैं तो रंगों की पूरी दुनिया उनके लिए खुल जाती है।

तहकीकात से सीखना

हम हर रोज़ छोटे-छोटे प्रयोग भी

चित्र-1: *बगीचों में पुवितम के बच्चे आसान औज़ारों का इस्तेमाल करते हैं। यह बच्चों को स्वाभाविक तौर पर इन औज़ारों की यांत्रिकी समझने का मौका देता है।*

करते हैं जो परिकल्पना, परीक्षण, अवलोकन और निष्कर्ष के चरणों से गुज़रते हैं। मिसाल के तौर पर, पहले और दूसरे स्तर के बच्चों के साथ एक चर्चा के दौरान पौधों के बढ़ने में धूप की भूमिका को लेकर एक प्रयोग उभरा था। इस चर्चा से दो मत निकले – एक मत था कि पौधों को सूरज की ज़रूरत होती है और दूसरा गुट यह नहीं मानता था। इन मतों को जाँचने के लिए हमने उन्हें अपने घरों से दो चीज़ें लाने के लिए कहा – पैकिंग करने में इस्तेमाल होने वाली फन्नी (बिस्किट या नाश्ते के पैकेट) और कुछ बीज (रसोई में आसानी-से मिलने वाले बीज जैसे रागी, गेहूँ, हरा चना, मेथी, सरसों, जीरा आदि)।

हमने थैलियों में मिट्टी, रेत और कम्पोस्ट खाद को बराबर भागों में मिलाकर डाला। थैलियाँ हमने प्लास्टिक पैकेट को काटकर बनाई थीं। फिर हमने इन गमलेनुमा थैलियों में बीज डाले और सिंचाई की। बच्चों को थैलियों को ऐसी जगह रखने को कहा जहाँ उन्हें लगता हो कि पौधे अच्छे से बढ़ सकेंगे। जिन बच्चों का मानना था कि पौधों को धूप की ज़रूरत होती है, उन्होंने अपनी थैलियाँ धूप वाली जगहों पर रख दीं। इसके उलट, जिनका मानना था कि पौधे बिना धूप के बढ़ सकते हैं, उन्होंने अपनी थैलियाँ कक्षा में, अलमारी के नीचे या छायादार अँधेरी जगहों में रख दीं। जो बच्चे दुविधा में थे, उन्होंने अपने दोस्तों का अनुसरण किया। दोनों गुटों ने अपने-अपने पौधों को पानी दिया और उनके बढ़ने का अवलोकन किया। एक हफ्ते के अवलोकन के बाद जिन बच्चों ने पौधे धूप में नहीं रखे थे, उन्होंने अपने पौधों को भी धूप में रख दिया। हमारी अगली चर्चा से पहले, अपनी पाठ्यपुस्तकों से रट्टा मारे बिना सभी बच्चे यह मान चुके थे कि पौधों को धूप की ज़रूरत होती है। तब हमने बच्चों को प्रकाश-संश्लेषण की चर्चा करके यह समझाया कि पौधों को खाना बनाने और बढ़ने के लिए, प्रकाश के साथ-साथ खनिजों (जिन्हें वे मिट्टी से प्राप्त करते हैं) और कार्बन डाइऑक्साइड (जिसे वे हवा से प्राप्त करते हैं) की भी ज़रूरत होती है।

बीज के पौधे में बदलने के अवलोकन से कई और सवाल एवं अवलोकन सामने आए (चित्र 2)। कुछ बच्चों ने यह देखा की कुछ बीज के अंकुर घास की पत्तियों जैसे दिख रहे थे जबकि बाकी में दो मोटी पत्तियाँ निकल आई थीं। तब हमने बच्चों को एकबीजपत्री और द्विबीजपत्री जैसी अवधारणाओं के बारे में बताया और उन्हें समझाया कि कैसे इस तरह के वर्गीकरण से अपने आसपास के पौधों के बारे में अध्ययन करने में आसानी होती है। हमने उनसे यह भी साझा किया कि इन वर्गों या समूहों के पौधों के जड़-तंत्र भी अलग-अलग होते हैं।

चित्र-2: *स्कूल के बगीचे में बीज रोपते हुए बच्चे।*

हर वर्ग के एक-एक पौधे को जड़ समेत गमले से निकालकर दिखाया और उन्हें मूसला जड़ और झकड़ा जड़ों के बारे में बताया। फिर बच्चों को इन पौधों को ध्यान-से देखने और पौधों के हर भाग का, जड़ सहित चित्र बनाने को कहा (बॉक्स 2)। इससे बच्चे स्कूल में और स्कूल के आसपास घूमकर, ये जाँचने-पहचानने के लिए प्रेरित हुए कि पेड़ एकबीजपत्री हैं या द्विबीजपत्री।

अगले दिन सुबह सैर के वक्त एक बच्चा यह जानना चाहता था कि उनकी शिक्षक ताड़ के पेड़ को एकबीजपत्री में वर्गीकृत करेंगी या द्विबीजपत्री में। शिक्षक चकरा गईं और उन्होंने बच्चे से यह पता लगाने के लिए कुछ वक्त माँगा। कुछ अनुसन्धान के बाद, शिक्षक ने जब सही जवाब बच्चे से साझा किया, तब बच्चे ने खुशी-से कहा, "मुझे तो पहले से ही पता था कि यह एकबीजपत्री है।" यह सुनकर वे हैरान रह गईं और उन्होंने बच्चे से पूछा, "ये तुम्हें कैसे पता चला?" तो बच्चे ने जवाब दिया, "क्योंकि इसकी जड़ घास की जड़ की तरह बढ़ती है।" सीखने की इसी प्रक्रिया (घटनाओं या गुणधर्मों का अवलोकन और अनजान तथ्यों का विश्लेषण कर निष्कर्ष निकालना) के

बॉक्स 2: कला और विज्ञान

कला वैज्ञानिक सोच विकसित करने की प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण भाग है। चित्रकला दृश्य दुनिया को समझने के लिए एक असरदार तरीका प्रदान करती है। चित्रकारी की प्रक्रिया में न सिर्फ चीज़ों को बारीकी-से देखने की ज़रूरत पड़ती है बल्कि यह बच्चों में लगन और संयम बढ़ाती है। यह बच्चों में यांत्रिकी और संरचना की समझ में अपार बढ़ोतरी कर सकती है। और, चूँकि चित्रकारी समझ की अभिव्यक्ति और सम्भावनाओं की संकल्पना, दोनों होती है इसीलिए यह बच्चों में एकाग्रता, कल्पनाशीलता, सृजन-क्षमता और सौन्दर्यबोध को बेहतर करती है। जब हम चित्र बनाते हैं तब हमारा दिल शान्त होता है और मस्तिष्क एकाग्र। हम अपनी आँखों से देखते हैं, मस्तिष्क में चीज़ की समझ बनाते हैं, दिल से अवलोकन करते हैं और हाथों से चित्रण करते हैं। इस गतिविधि में हमारा दिमाग, दिल और हाथ आपस में ताल-मेल से काम करते हैं। बच्चों की शुरुआती चित्रकारी गोदा-गादी ही होती है। हम बच्चों से उनकी गोदा-गादी के बारे में बातें करके, उनकी क्षमता, रुचि और कल्पनाशीलता के बारे में काफी कुछ जान सकते हैं। मैं यह देखकर बार-बार हैरान हुई हूँ कि बच्चे कितना कुछ देख सकते हैं और बिना पढ़ाए कितना सीख सकते हैं। उदाहरण के लिए, एक तीन साल की बच्ची ने कुछ लकीरें गोदीं। मैंने उससे पूछा कि उसने क्या बनाया है। उसने कहा 'गाय'। सम्भव है कि यह बिना सोचा-समझा जवाब हो। मैंने कहा, "वाह! यह तो बहुत सुन्दर गाय है। पर मुझे इसके सींग नहीं दिख रहे हैं। तुमने बनाए थे क्या?" वह बोली, "नहीं, मैंने नहीं बनाए थे।" फिर वह सींग-जैसे कुछ बनाने लगी। जब मैंने पूछा कि पूँछ कहाँ है, तो उसने गोदा-गादी के दूसरे छोर पर कुछ बना दिया जिसे देखकर मैं भौचक्की रह गई। मैंने गाय के पैरों के बारे में पूछा तो बिना गिनती जाने, उसने चार पैर बना दिए। और उसने इन्हें बीच में बनाया। स्पष्ट था कि बच्ची को 'क्या कहाँ है' की समझ है और वह परिमाण के पारस्परिक सहसम्बन्ध भी बना पा रही थी! क्या यह वैज्ञानिक सोच नहीं है? क्या इसमें वैज्ञानिक विचार शामिल नहीं है और क्या यह वैज्ञानिक मिज़ाज को बढ़ावा नहीं देता?

कला को विज्ञान से जोड़ने में एक दिक्कत यह है कि कला को अक्सर सिर्फ उसकी 'सुन्दरता' से परखा जाता है। इसीलिए कई बड़े बच्चे और शिक्षक भी चित्र बनाने से कतराते हैं। उन्होंने एक मत बना लिया है कि वे चित्र नहीं बना सकते। चित्र न बनाना अवलोकन से सीखने की उनकी क्षमता को बाधित करता है। जब विज्ञान सीखने में कला का उपयोग किया जाता है, तब चित्र की 'सुन्दरता' से ज़्यादा महत्वपूर्ण हो जाता है अवलोकन करना और मुख्य लक्षणों को चित्रित करना। न सिर्फ बच्चों, बल्कि शिक्षकों को भी चित्रकला करने के लिए प्रोत्साहित करना ज़रूरी है। तभी वे सीखने में चित्रकला की क्षमता को सराह सकेंगे।

माध्यम से बच्चों का परिचय विज्ञान की प्रक्रिया से होता है।

और अन्त में

पुवितम में हम ऐसे लोगों की परवरिश करना चाहते हैं जिन्हें धरती की परवाह हो। ऐसे लोग जो एक ज़्यादा ज़िम्मेदार ज़िन्दगी जीएँगे, जो इस ग्रह पर जीवन बचाने और इसे बरकरार रखने के लिए अपनी आवाज़ उठाएँगे, और इस दिशा में काम करेंगे। पर हम इस मकसद के लिए विज्ञान नहीं पढ़ाते हैं; हमारी कोशिश तो एक ऐसी जगह बनाने की है जहाँ बच्चों में स्वाभाविक कौतूहल बढ़े (बॉक्स 3)। बच्चे अवलोकन, अनुमान, अभिव्यक्ति, अनुमान में संशोधन जैसी प्रक्रियाओं से बड़े ही प्राकृतिक ढंग से विज्ञान सीखते हैं। हम बच्चों को विज्ञान सिर्फ एक बौद्धिक गतिविधि की तरह नहीं पढ़ाते हैं, बल्कि हमारी कोशिश तो बच्चों को परवाह करना सिखाना है। बच्चे अपने परिवेश, और धरती की बर्बादी में अपने योगदान के प्रति शिद्दत से जागरूक हो जाते हैं। हम

बॉक्स 3: शिक्षक एक मददगार की भूमिका में

इस तरह से सीखने के माहौल का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है कि शिक्षक एक मददगार की भूमिका में हो। जब बच्चा कोई सवाल पूछे तो सहजकर्ता उस सवाल से ऐसे रूबरू हो कि बच्चे के तार्किक चिन्तन और निगमनात्मक योग्यता (deductive abilities) को बढ़ाने में मदद मिले। जैसे,

बच्ची: "पानी आसमान में कैसे पहुँचता है और बारिश कैसे बन जाता है?"

मैं: "वाह! क्या बढ़िया सवाल है! मैंने कभी क्यों नहीं सोचा? मुझे भी जानना है कि पानी वहाँ कैसे पहुँचा। तुम्हें क्या लगता है, वो वहाँ कैसे गया होगा?"

बच्ची: "वो ज़रूर पहले से ही वहाँ रहा होगा।"

मैं: "हम्म! ये तो हो सकता है! सचमुच, मैं भी हमेशा ये जानना चाहती थी कि मेरे गीले कपड़ों से पानी कहाँ चला जाता है। ज़रूर वो हवा में जाता होगा।"

इस तरह मैंने धीरे-से उसे वाष्पीकरण की अवधारणा की ओर ठेला। फिर हमने संघनन पर एक प्रयोग किया जिससे उसे अपने सवाल का जवाब खुद समझ में आ गया। जब शिक्षक सारे सवालों के जवाब देते हैं तब बच्चे शिक्षक पर निर्भर हो जाते हैं और खुद से ज़्यादा शिक्षक पर यकीन करने लगते हैं। इसकी बजाय ज़रूरी यह है कि एक शिक्षक अपने अन्दर विनम्रता विकसित करे जो बच्चे के सवालों के सम्मुख हथियार डाल देने के लिए ज़रूरी है। शिक्षक बच्चों को खुद जवाब खोजने में मदद करने के लिए हैं, न कि यह दिखाने के लिए वे क्या-क्या जानते हैं।

विज्ञान को महज़ देखते नहीं हैं; हम बच्चों में यह पक्की समझ बना देना चाहते हैं कि विज्ञान को हमारी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी से जुदा नहीं किया जा सकता है। ज़िन्दगी बहुत सारे अनुभवों का समेकन है। और हर अनुभव ज़िन्दगी के साथ समझदारी से सम्बन्ध बनाना सीखने का, और सभी जीवों की भलाई के लिए जीने का एक मौका देता है।

खास बातें

- स्कूल और रोज़मर्रा की गतिविधियों में बच्चों और बड़ों को शामिल करने से उन्हें प्राकृतिक परिघटना के अवलोकन और विवेचन के कई मौके मिलते हैं।
- सीखने की प्रक्रिया – घटनाओं व प्रक्रियाओं या गुणधर्मों के अवलोकन और अज्ञात तथ्यों के बारे में राय व समझ बनाना – में तहकीकात और प्रयोगों को बढ़ावा देने से विद्यार्थियों को विज्ञान की प्रक्रिया का व्यावहारिक परिचय मिलता है।
- अवलोकन दर्ज करने के लिए कला के इस्तेमाल को प्रोत्साहित करने से बच्चों और बड़ों, दोनों में वैज्ञानिक सोच, यांत्रिकी और संरचना की समझ बेहतर होती है।
- जब शिक्षक बच्चों को अपने सवालों के जवाब खुद खोजने में मदद करते हैं तो वे बच्चों में तार्किक चिन्तन और निगमनात्मक योग्यता को बढ़ावा देने में मदद करते हैं।

मीनाक्षी उमेश: मुम्बई में जन्मीं और पली-बढ़ीं। उनके मन में मानव समाज में फैली असमानता के बारे में हमेशा से कई सवाल रहे हैं। 18 साल की उम्र में वे इस निष्कर्ष तक पहुँच गई थीं कि ये सारी असमानताएँ मुख्यधारा की शिक्षा से ही जारी रखी जाती हैं। उन्होंने 1992 में तमिलनाडु में धरमपुरी में कुछ ज़मीन खरीदी और 2002 में पुवितम गतिविधि केन्द्र चालू किया। उनका उद्देश्य लोगों का एक ऐसा अराजक और समतावादी समाज बनाना है जो सिर्फ प्रकृति को अपना भगवान और हमारे ग्रह को अपना एकमात्र घर माने।

अँग्रेज़ी से अनुवाद: अपूर्वा राजे: एकलव्य, भोपाल की शिक्षा साहित्य की प्रकाशन टीम के साथ सम्बद्ध हैं।

सभी फोटो: मीनाक्षी उमेश।

यह लेख *आई-वण्डर* पत्रिका के अंक-9, जून 2021 से साभार।

दास्तान-ए-भोजन

अनुभव केन्द्रित शिक्षा का एक प्रयास

मिहिर पाठक

शिक्षा के उद्देश्यों पर गौर करें तो समझ में आता है कि शिक्षा सिर्फ बौद्धिक दक्षताओं के विकास के लिए ही नहीं, बल्कि मानव के समग्र विकास का उद्देश्य भी रखती है। बौद्धिक विकास के साथ-साथ शारीरिक और मनोसामाजिक विकास भी बच्चों के सर्वांगीण विकास के अभिन्न अंग हैं। लेकिन हमारी शालाओं में किया जाने वाला ज़्यादातर शिक्षा-कार्य, बौद्धिक दक्षताओं को ध्यान में रखकर ही किया जाता है।

विशिष्ट विषय को कक्षा में पढ़ने-पढ़ाने की यात्रा में कई बार बच्चों के विकास के अन्य पहलू गौण रह जाते हैं, जिसके फलस्वरूप, पढ़ाई महज़ कुछ जानकारी व जीवन से कोई वास्ता न रखने वाला, एक अमूर्त खयाल बनकर रह जाती है।

ऐसे में सोचने की ज़रूरत है कि क्या हम बच्चों को ऐसा माहौल दे सकते हैं, जहाँ –

- शैक्षणिक विषयों को बौद्धिक, मनोसामाजिक एवं शारीरिक विकास के साधन के रूप में भी देखा जाए?
- शैक्षणिक विषयों को बच्चों के दैनिक जीवन के साथ जोड़कर, उन्हें मज़ेदार बनाने के लिए, बच्चों के परिवेश एवं अनुभवों पर केन्द्रित विधि का उपयोग किया जाए?
- शाला में अक्सर गौण माने जाने वाले मुद्दे, जैसे – मनोसामाजिक विकास, समूह में काम करना, आलोचात्मक तरीके से सोचने का कौशल, सृजनात्मकता, संवाद आदि को टटोलने के मौके भी मिलें?

ऐसे ही कुछ सवालों के जवाब खोजने के लिए मैंने, वडोदरा में, कुछ मित्रों के साथ मिलकर एक प्रयोग किया। इस प्रयास में हमने 12 से 15 साल के 25 बच्चों के साथ मिलकर, शहर से दूर एक फार्महाउस में, दो दिन के एक आवासीय कैम्प की शुरुआत की। ये बच्चे वडोदरा शहर के आसपास के ग्रामीण और अर्ध-शहरी इलाकों से आए थे। किसी के माता-पिता बड़ी कम्पनी में नौकरी करते थे, तो किसी का परिवार दिहाड़ी पर काम करता था। वडोदरा में स्थित एक स्वैच्छिक संस्था हर साल कुछ ज़रूरतमन्द बच्चों को छात्रवृत्ति उपलब्ध करवाती है। यह संस्था 9वीं कक्षा से कुछ बच्चों

को चुनती है और उन्हें 12वीं कक्षा तक आर्थिक मदद, मेंटरशिप और अन्य एक्सपोज़र उपलब्ध करवाती है। इस कैम्प में कुछ मित्रों के बच्चों के साथ, इस संस्था के बच्चे भी शामिल थे। कैम्प का विषय था 'हमारा भोजन'। यहाँ मैं कैम्प में आयोजित की गई कुछ चुनिन्दा गतिविधियों का वर्णन और विश्लेषण प्रस्तुत कर रहा हूँ।

फिल्म के ज़रिए चर्चा

कैम्प की शुरुआत भोजन से जुड़ी कुछ कहानियों और किस्सों से हुई। गुजराती में 'लाडु नू जमण' (लड्डू का भोजन) नाम की एक कहानी है। इस कहानी में एक शिक्षक को लड्डू से बड़ा प्यार है, यूँ कहो कि आसक्ति ही है। यहाँ तक कि इस लड्डू की आसक्ति की वजह से महाशय को अपनी नौकरी भी छोड़नी पड़ी।

हमने इस कहानी पर आधारित एक फिल्म देखकर, बच्चों से चर्चा की –

"आपको खाने की किस चीज़ से आसक्ति है?"

"आपको जब वो चीज़ नहीं मिलती, तब कैसा लगता है?"

"क्या आप कभी ऐसा करते हो कि पेट भरा हो, पर फिर भी सिर्फ स्वाद के लिए कोई चीज़ खा रहे हो?"

"कभी ऐसा किया है कि आपको पता है कि अमुक चीज़ स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है, तब भी केवल स्वाद के लिए उसे खाया हो?"

"क्या ऐसी चीज़ें कभी-कभी खाना ठीक है?"

"अगर वो चीज़ न मिले, तो क्या विचलित होना ठीक है?"

बच्चों के साथ चर्चा में काफी सारी चीज़ें निकलकर आईं। किसी बच्चे को पिज़्ज़ा से आसक्ति थी तो किसी को चॉकलेट से, किसी को पानी-पूरी, तो किसी को चाट से। कुछ बच्चों ने यह भी बताया कि उन्हें पता है कि ये सब स्वास्थ्यवर्धक नहीं हैं, पर तब भी वे इन्हें स्वाद के लिए खा लेते हैं। चर्चा आगे बढ़ते-बढ़ते नए सवालों को खोलने लगी। जैसे – 'स्वास्थ्यवर्धक खाना' यानी क्या? क्या स्वास्थ्यवर्धक और स्वादिष्ट, दोनों गुण एक ही रेसिपी में हो सकते हैं? इसके बाद, हम चर्चा को एक और नया मोड़ देते हुए पारम्परिक रेसिपी की बात करने लगे।

चर्चा का उद्देश्य किसी अन्तिम सत्य तक पहुँचना नहीं, बल्कि भोजन से जुड़े नए-नए पहलुओं को खोलना था। इसके साथ ही, एक उद्देश्य यह भी था कि बच्चे विविध परिस्थितियों में अपने मनोभावों को समझें। बच्चों के मनोसामाजिक विकास के लिए ऐसे छोटे-छोटे मौके बहुत कारगर होते हैं।

बारीकी-से जाँच

आसक्तियों पर बात करने के बाद हम फूड पैकेट की ओर बढ़े। शुरुआत कुछ सवालों से हुई – क्या हमें पता

है कि हम जो खाना पैकेट में से खा रहे हैं, उसमें कौन-कौन-से घटक हैं? ये घटक हमारे स्वास्थ्य पर कैसा असर डालते हैं?

हमने बच्चों को उनके पसन्दीदा पैकेट दिए, जैसे कि मेगी, पास्ता, कुरकुरे आदि। पैकेट पर क्या-क्या जानकारी लिखी गई है? यह पैकेट कहाँ बना है? कब बना है? पैकेट में कौन-कौन-से घटक हैं? इसे लम्बे समय तक खाने लायक बनाए रखने के लिए कौन-से रसायन डाले गए हैं? इन सबको लेकर बच्चों ने छानबीन शुरू कर दी।

बच्चों ने विकिपीडिया की मदद से विविध घटकों के बारे में जानकारी प्राप्त करने की कोशिश भी की। कुछ जानकारी तो बहुत ही चौंका देने वाली थी। कुछ रसायन ऐसे थे जिनका सेवन लम्बे समय तक करने से कैंसर का खतरा हो सकता है। बच्चों ने फूड पैकेट से होने वाले पर्यावरणीय नुकसान के बारे में भी सवाल उठाए।

इस गतिविधि के दौरान किसी खाद्य-वैज्ञानिक से बातचीत हो पाती, या कुछ प्रयोग करके देखे जाते, तो यह चर्चा और भी सार्थक हो सकती थी।

इस गतिविधि का उद्देश्य था कि बच्चे जो कुछ खाते हैं, उसके प्रति जागृत हों। साथ ही, इंटरनेट से सही जानकारी जुटाना, समूह में काम करना और जुटाई हुई जानकारी को साझा करना सीखें।

मौसमी खान-पान

हम किस ऋतु में कौन-से फल और सब्ज़ियाँ खाते हैं? किस ऋतु में कौन-सा अचार बनता है? हमें क्यों जिस ऋतु में जो फल-सब्ज़ी मिल रहे हों, वही खाने चाहिए?

इन सवालों के साथ अगली गतिविधि की शुरुआत हुई। बच्चों ने, अपने अनुभवों से और साथ-साथ कैम्प में मौजूद लोगों के इंटरव्यू लेकर, मौसमी खान-पान का चार्ट बनाने की कोशिश की।

चर्चा कई संवेदनशील व रोचक मुद्दों से होकर गुज़री। जैसे – किसानों का जीवन-यापन, बाज़ार कैसे काम करता है, एक जगह से दूसरी जगह फल या सब्ज़ी ले जाने की क्या प्रक्रिया होती है, उसे कैसे संग्रहित किया जाता है इत्यादि।

बच्चों से चर्चा में यह निकलकर आया कि जिस ऋतु में जहाँ-जहाँ जो फल-सब्ज़ियाँ उगती हैं, हमें वही खानी चाहिएँ क्योंकि वे सस्ती होती हैं, प्राकृतिक तरीके से पकी हुई होती

हैं, साथ ही, उन्हें उनकी स्थानीय जगह से ही खरीदकर खाने से उनके आवागमन और संग्रहण में कम ऊर्जा लगती है। तो इस तरह, यह पर्यावरण के लिए भी लाभदायी है।

एक बच्चे ने किसान आत्महत्या पर सवाल उठाया। ऐसी क्या परिस्थिति बन पड़ती है कि किसानों को आत्महत्या करनी पड़ती है? क्या खेती में लाभ नहीं होता? अन्य बच्चों ने जोड़ा कि खेती बहुत ही अनिश्चितताओं भरा काम है। जलवायु परिवर्तन के कारण बारिश और फलों के समय में भी काफी परिवर्तन देखने को मिले हैं।

बच्चों को यह जानने में रुचि थी कि हम किसान-मित्रों की मदद कैसे कर सकते हैं। बच्चों की इस प्रकार की संवेदनशीलता देख मुझे बहुत सन्तोष हुआ।

पूरे दिन मज़ेदार चर्चाओं के बाद, बच्चों ने शाम को खेत में कुछ साहसी खेल खेले, और रात में सब ने साथ मिलकर गरबा किया। अगले दिन सुबह का नाश्ता और चाय बच्चों ने बनाई।

थाली में छिपा पोषण ढूँढ़ना

दूसरे दिन के सत्र की शुरुआत हमने हमारी थाली में छिपे पोषण को ढूँढ़ने से की। कोई विद्यार्थी दाल में कैलरी की मात्रा ढूँढ़ता, तो कोई

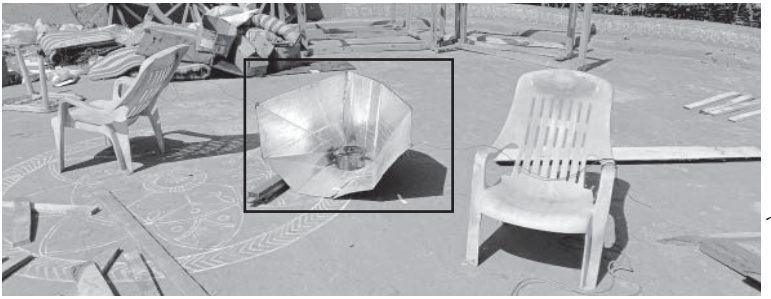

फनल सोलर कुकर

चावल के बारे में पढ़ता। यह जाँच-पड़ताल अलग-अलग सवालों की ओर ले गई। बहुत-सी हानिकारक खाद्य चीज़ों में मैदा क्यों पाया जाता है? मैदा तो बहुत बारीक होता है, तब भी उसके पाचन में इतना समय क्यों लगता है?

बच्चे इंटरनेट और पाठ्यपुस्तक की मदद से जानकारी जुटा रहे थे, और फिर चार्ट पर ग्राफ और विविध प्रकार के संकेतों की मदद से जानकारी को चित्रित कर रहे थे। विज़्युअल डेटा रीप्रेज़ेंटेशन की स्किल पर सुन्दर प्रायोगिक काम होता हुआ दिखा।

हमने तय किया कि जब अगली बार मिलेंगे तब अलग-अलग खाद्य पदार्थों में छिपे पोषण ढूँढ़ने के लिए वैज्ञानिकों की तरह प्रयोग करेंगे।

सोलर कुकर बनाना

भोजन के साथ 'भोजन बनाने की प्रक्रिया' भी जुड़ी है। हमने बच्चों के साथ मिलकर भोजन बनाने की विविध प्रक्रियाओं पर बातचीत की। खाना प्रेशर कुकर में पकाना चाहिए या कढ़ाई में? तेल पहले डालना चाहिए या बाद में? क्या सोलर कुकर से स्वादिष्ट खाना बनाया जा सकता है?

चर्चा में से निकलकर आया कि प्रेशर कुकर में भाप से खाना पकता है। कुकर में गर्मी संग्रहित होती है, इसलिए ऊर्जा का व्यय कम होता है और खाना जल्दी पक जाता है।

फिर हमने फॉइल और कार्डबोर्ड की मदद से सोलर कुकर बनाया। पहले हम सभी को लगता था कि सोलर कुकर बहुत महँगा होता होगा, और उसे बनाना बहुत कठिन। पर जब हमने फॉइल और कार्डबोर्ड का उपयोग करके सोलर कुकर बना लिया, तो हमारे पूर्वानुमान गलत साबित हुए, और हमें एक अनोखा आत्मविश्वास मिला।

सोलर कुकर कई प्रकार के होते हैं। हमने जो कुकर बनाया, वह 'फनल सोलर कुकर' था। इसी सिलसिले में, हमने ब्राज़ील में हमारे एक दोस्त से वीडियो कॉल पर बात

की जो एक यूनिवर्सिटी में अध्यापक हैं और कई प्रकार के सोलर कुकर बनाते हैं। उन्होंने हमें विविध प्रकार के सोलर कुकर दिखाए। बच्चों ने मिलकर उनका विश्लेषण किया। कौन-सा कुकर ज़्यादा कारगर है? भारत के विभिन्न हिस्सों में खाना बनाने की विविध प्रक्रियाओं के अनुसार, कहाँ कौन-सा कुकर ज़्यादा उपयुक्त होगा?

इन सवालों के बाद एहसास हुआ कि सोलर कुकर तो बना लिया, अब पकाएँ क्या!

हमने पिछले दिन रागी की चर्चा की थी। तो सोचा कि क्यों न रागी के केक बनाकर कुकर में रखे जाएँ। बच्चे थोड़े निराश हुए कि गुड़ और रागी से बने ये केक बाज़ार के केक जैसे मीठे नहीं थे, पर उन्हें मज़ा बहुत आया। उन्हें सन्तोष था कि प्राकृतिक घटकों से बने इन केक के स्वाद के प्रति वे शायद धीरे-धीरे आदी हो जाएँगे।

बच्चों का फीडबैक

बच्चों ने फीडबैक में बताया कि कैम्प में सीखने में बहुत मज़ा आया, क्योंकि यहाँ स्कूल जैसा वातावरण नहीं था। यहाँ पर टीचर भी साथ मिलकर काम करते थे। टीचर से कुछ भी पूछ सकते थे। अगर सत्र में मज़ा नहीं आ रहा, तो वह भी बता सकते हैं। कैम्प में मौजूद सीखने का अनौपचारिक वातावरण बच्चों को अपने-आप को अभिव्यक्त करने की सुरक्षित जगह देता नज़र आया।

बच्चों ने साझा किया कि हमें किसान भाई-बहनों को धन्यवाद देना चाहिए। उन्होंने यह भी बताया कि जब तक सोलर कुकर में केक को बेक होते हुए नहीं देखा, तब तक उन्हें अन्दाज़ा नहीं था कि सूरज की गर्मी में इतनी शक्ति होती है।

'मैदा सेहत के लिए इतना खराब

क्यों है?' यह सवाल उनके मन में घर कर गया था। कुछ बच्चों ने कहा कि वे अब पैकेट में मिलने वाले खाद्य पदार्थ खाना कम करेंगे।

"मिहिर भैया, मुझे मेगी और पास्ता बहुत पसन्द है। मैं उन्हें नहीं छोड़ पाऊँगी।" इस पर किसी ने सुझाव दिया, "क्यों न हम मेगी और पास्ता बनाने के लिए कुछ अलग घटकों का उपयोग करें? उसे ज़्यादा स्वास्थ्य-वर्धक और स्वादिष्ट बनाएँ?"

स्व-निर्देशित प्रोजेक्ट

कैम्प पूरा होने के बाद, बच्चे कुछ सवालों के साथ घर लौटे, और घर पहुँचते ही उन सवालों का उत्तर ढूँढ़ने के लिए उन्होंने खोजबीन शुरू कर दी।

कैम्प की एक प्रतिभागी ने मैदे के बारे में रिसर्च करने की ठान ली। कुछ अन्य बच्चों के समूह ने मेगी, पास्ता, पीज़्ज़ा जैसे फास्ट-फूड की वैकल्पिक रेसिपी ढूँढ़ना शुरू किया।

हमारी सहजकर्ता टीम के द्वारा हर हफ्ते ऑनलाइन मीटिंग की जाती और बच्चों को सन्दर्भ-साहित्य ढूँढ़ने व खोजबीन एवं शोध की रणनीति बनाने के लिए मार्गदर्शित किया जाता।

कैम्प और उसके बाद बच्चों को प्रोजेक्ट के लिए मार्गदर्शित करने का सफर, मेरे लिए हर पल सीखने की सम्भावना लेकर आया।

अनुभव और अनुभव पर चिन्तन

इस पूरे उपक्रम में, बच्चे अपने परिवार से दूर, एक अलग समूह के साथ, कम सुविधा वाली जगह पर, दो दिन तक साथ मिलकर रहे। इस दौरान, उन्होंने एक-दूसरे के साथ मिलकर समस्याएँ सुलझाने, चर्चा करने, अपने-आप को अभिव्यक्त करने और साथ ही, किसी मुद्दे पर नई समझ बनाने का काम किया। एक ही विषय के अलग-अलग पहलुओं को समझने की कोशिश की, जिससे चीज़ों को देखने के क्षितिज विस्तृत हुए।

यहाँ फैसिलिटेटर और बच्चों का आपसी रिश्ता बेहद महत्वपूर्ण था। इस रिश्ते में डर नहीं था, तुलना और स्पर्धा भी नहीं थी। एक ऐसी जगह थी जहाँ बच्चे अपनापन महसूस करें और खुद को खुले दिल से अभिव्यक्त कर सकें। यहाँ बच्चों के मत को सुना जाता था, महत्व दिया जाता था। साथ ही, बच्चों को सवाल पूछने के लिए प्रेरित किया जाता था।

सीखने की ऐसी प्रक्रिया में कोई लालच देने की या डराने-धमकाने की ज़रूरत नहीं पड़ती। सीखने की यह यात्रा जीवन से जुड़ी है। बच्चे अपने-आप को इन मुद्दों के साथ जोड़ पाते हैं। इसीलिए यह यात्रा मज़ेदार, अर्थपूर्ण और गहरी बनी रहती है।

हम अपनी शालाओं में भी इस तरह के लर्निंग एक्सपीडिशन, यानी

सीखने की यात्राएँ कर सकते हैं, जिसमें विविध विषयों का जुड़ाव हो, विषय-सम्बन्धी ज्ञान और दक्षताओं के साथ-साथ मनोसामाजिक विकास और इक्कीसवीं सदी के लिए ज़रूरी कौशलों को भी इस दायरे में लाकर टटोला जाए।

खोजबीन-यात्रा की शुरुआत

एक्सपीडिशन की शुरुआत बच्चों के परिवेश, रुचि और जिज्ञासा से जुड़े किसी सवाल, समस्या या टॉपिक से कर सकते हैं। जैसे कि हम 'फाइबर टू फेब्रिक' या 'कपास से कपड़ा' विषय ले सकते हैं, जिसमें प्रमुख सवाल हो सकता है – रूई से धागा और फिर कपड़ा कैसे बनता है?

पाँचवीं से लेकर आठवीं कक्षा के बच्चों के साथ, इस प्रकार के प्रश्नों पर चर्चा की जा सकती है। चर्चा में हम रूई के खेत से लेकर कपड़ों की बुनाई तक के सफर का अनुभव बच्चों को करवा सकते हैं।

इनपर आधारित चर्चाएँ और खोजबीन कई रास्तों और सवालों की ओर ले जा सकती हैं। जैसे, रूई उगाने वाले या भेड़ से ऊन निकालने वाले समुदाय को जानना, उनके रोज़मर्रा के जीवन को समझना। फिर, रूई में से ताना-बाना कैसे बनता है? हाथ से बुनाई कैसे होती है? सिंथेटिक कपड़े और प्राकृतिक कपड़ों में क्या अन्तर होता है? हाथ से की हुई बुनाई और मशीन से की हुई बुनाई में क्या कोई फर्क होता है?

इन सारे सवालों पर चर्चा करते हुए और प्रत्यक्ष अनुभव करते हुए सीखने की यात्रा पर निकल सकते हैं। विज्ञान एवं सामाजिक विज्ञान जैसे विषयों के उद्देश्य इस उपक्रम में अच्छी तरह पूरे हो सकते हैं। आखिर में, बच्चे अपना कपड़ा बुनना सीखें, इससे ज़्यादा खुशी की बात और क्या हो सकती है!

मिहिर पाठक: पिछले 9 सालों से बच्चों और शिक्षकों के साथ अध्ययन-अध्यापन कार्य से जुड़े हैं। वे प्रोजेक्ट बेज़्ड लर्निंग, थिएटर इन एजुकेशन और आनुभविक अध्ययन जैसी पद्धतियों में रुचि रखते हैं।

सभी फोटो: मिहिर पाठक।

इस लेख के लिए सामग्री जुटाने और अनुवाद करने में पूर्वी निसार व सोनल बक्षी ने मदद की।

जेंडर की जकड़न को तोड़ती कहानियाँ

बच्चों के साथ बातचीत

ब्रजेश वर्मा

हम देखते हैं कि हमारा समाज वर्ग, वर्ण और जेंडर के आधार पर पूरी तरह से बँटा हुआ है और समाज में इन अलग-अलग वर्गों के आपसी मेल-मिलाप का कोई ज़रिया भी नहीं है। इसलिए लोग एक-दूसरे के बारे में जान ही नहीं पाते। हमारी स्कूली व्यवस्था भी इस अलगाव को तोड़ने में कोई मदद नहीं करती। स्कूल में जेंडर के मुद्दों पर बातचीत की बहुत सम्भावनाएँ हैं किन्तु यहाँ इन मुद्दों पर ज़्यादा चर्चाएँ होती ही नहीं हैं। चूँकि घरों में भी इन मसलों पर बात की कोई गुंजाइश नहीं है, इस कारण बचपन से ही बच्चों में अपने आसपास की दुनिया और दिन प्रतिदिन के अनुभवों की वजह से जेंडर को लेकर अधिकांशतः नकारात्मक विचार पनपते रहते हैं। मौजूदा समाज में समलैंगिकता, थर्ड जेंडर, क्वेर जैसे मुद्दों पर बात करना तो बिलकुल भी उचित नहीं समझा जाता। बच्चों से इन मसलों को हमेशा छुपाया जाता है। इन सभी कारणों से बच्चों में जेंडर और यौनिकता के बारे में व्यापक समझ विकसित नहीं हो पाती, बल्कि इसके विपरीत, बहुत-सी भ्रान्तियाँ पैदा हो जाती हैं।

समाज में लड़कों को अलग तरह से तैयार किया जाता है और लड़कियों को अलग तरह से। इन विषयों पर चर्चा और जानकारी के अभाव में लड़के-लड़की के लिए 'तय सामाजिक मापदण्डों' से 'अलग तरह से रहने वाले' लोगों के प्रति बच्चे संवेदनशील नहीं बन पाते और यह क्रम लगातार चलता रहता है।

साहित्य में सम्भावनाएँ

ऐसी स्थिति में जहाँ सामाजिक विभेद के कारण इन्सानों की दुनिया में लोग अपने से अलग लोगों व समुदायों से मिल नहीं पाते, साहित्य की दुनिया अपने से अलग व्यक्तियों और समुदायों को समझने और जानने का एक माध्यम बन सकती है। बच्चों को मिलने वाला विविधतापूर्ण साहित्य, इसमें एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है और हम सभी को इस दिशा में संवेदनशील बना सकता है।

आम तौर पर बच्चों को राजा-रानी, जंगल और जानवर, परियों, भूतों आदि की कहानियाँ आसानी-से पढ़ने को मिल जाती हैं किन्तु समाज के सभी वर्गों की आवाज़ को बराबरी से जगह देने वाले साहित्य की कमी अक्सर खलती है। जिस तरह की गैरबराबरी हमें समाज में दिखती है, वही चुप्पी हमें साहित्य में भी दिखाई देती है। हाशियाकृत समुदायों, मुस्लिम, दलित, विमुक्त घुमक्कड़ समुदायों आदि के जीवन को उनकी सम्पूर्णता में प्रस्तुत करने वाला साहित्य, हमें विरले ही देखने को मिलता है। इसी प्रकार समाज के कुछ खास वर्गों जैसे समलैंगिक, किन्नर, क्वेर इत्यादि समुदायों का प्रतिनिधित्व करने वाला सहित्य, हमें बाल साहित्य की दुनिया में दिखाई ही नहीं देता। इस वजह से बच्चे इन समुदायों के बारे में साहित्य के माध्यम से भी जान नहीं पाते और उनके मन में तरह-तरह की भ्रान्तियाँ घर कर जाती हैं और वे अक्सर जीवन भर इन भ्रान्तियों से बाहर नहीं निकल पाते।

परन्तु यह भी देखा गया है कि यदि इन मुद्दों पर बच्चों के साथ शुरुआत से ही चर्चा की जाए तो बच्चों की सोच में एक पर्याप्त विस्तार आ सकता है और वे उन लोगों को भी खुलेपन से स्वीकार कर सकेंगे जो खुद को अपनी सामाजिक पहचान से अलग हटकर महसूस करते हैं और अपनी शर्तों पर जीना चाहते हैं। इस सन्दर्भ में मैं अपने कुछ अनुभव प्रस्तुत कर रहा हूँ।

अलग-सी कहानियों पर चर्चा

लाइब्रेरी क्लास में बच्चों के साथ जेंडर के ढाँचे को तोड़ने के लिए मैंने इन विषयों पर आधारित कुछ कहानियाँ चुनीं व पढ़ीं और इन विषयों पर बच्चों के विचार जानने की कोशिश की। *एकलव्य* द्वारा प्रकाशित रिनचिन की कहानी, 'अजूबा' (2018), *मुस्कान* द्वारा प्रकाशित कनक शशि

कहानियों का परिचय

गुठली कैन फ्लाइ (कनक शशि) - गुठली ने एक लड़के के रूप में जन्म लिया किन्तु वह खुद को एक लड़की की तरह महसूस करती है, दिवाली पर उसके फ्रॉक पहनने पर माँ-पिताजी नाराज़ हो जाते हैं; भाई-बहन उसका मज़ाक उड़ाते हैं। गुठली दुखी व अकेला महसूस करती है, और शान्त रहकर अपना विरोध दर्शाती है। अन्त में, माँ उसे एक फ्रॉक गिफ्ट करती है जिसे पहनकर गुठली बहुत खुश होती है।

अजूबा (रिनचिन) - इस कहानी में 'पानी' एक पात्र है जिसे गाँव के लोग नर्सरी में रहने कि अनुमति देते हैं, लेकिन पानी का व्यवहार गाँव के लोगों को परेशान करता है। जब गाँव के लोग उसकी पहचान पूछते हैं तो वह बताता है कि चांदनी से प्यार करते वक्त वह लड़की है और राजा से प्यार करते वक्त वह लड़का है। पानी के इस व्यवहार से परेशान होकर गाँव के लोग उसे गाँव से चले जाने को कहते हैं।

नवाब से नंदनी (माया शर्मा) - यह कहानी एक ऐसे व्यक्ति की कहानी है जो शरीर से तो मर्द है किन्तु उसकी पहचान आदमी की नहीं है, उसकी चाल-ढाल सब औरतों की तरह है। ट्रांस जेंडर की सच्चाई को बताती यह कहानी, जेंडर को आदमी और औरत के दो खाँचों में बाँटने को चुनौती देती है।

की कहानी 'गुठली कैन फ्लाइ' (2019) और *निरंतर* द्वारा प्रकाशित माया शर्मा की कहानी 'नवाब से नंदनी' (2006) जैसी किताबें बच्चों के साथ पढ़कर, उन पर चर्चा की गई।

चर्चा में भोपाल शहर की कच्ची बस्तियों में रहने वाले गोंड, पारधी, ओझा-गोंड और दलित, कंजर एवं अन्य विमुक्त जातियों के बच्चे शामिल थे जो *मुस्कान* द्वारा संचालित स्कूल 'जीवन शिक्षा पहल' में नियमित रूप से पढ़ने आते हैं। बच्चों की उम्र लगभग 15 से 18 साल के बीच थी। बच्चों के माता-पिता असंगठित क्षेत्र में काम करने वाले दिहाड़ी मज़दूर हैं जो गड्ढे खोदने, कचरा बीनने व नगर निगम की कचरा गाड़ी पर काम करते हैं। ये बच्चे अपनी और परिवार की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए पढ़ाई के साथ-साथ सुबह और शाम काम करने भी जाते हैं। कुछ बच्चे कचरा चुनने का काम करते हैं तो कुछ बारात में लाइट पकड़ने का, और कुछ बच्चे शादी-पार्टी में खाना परोसने का काम करते हैं। बच्चे सुबह जल्दी उठकर कचरा बीनने का अपना काम खत्म करके, पढ़ाई करने के लिए *मुस्कान* स्कूल आ जाते हैं।

बच्चों ने इन किताबों को पढ़कर, अपने विचारों और अपने व दोस्तों के अनुभवों को साझा किया। इस अनुभव से समझ में आया कि मौका मिलने पर

उनकी चर्चा, समझ और अनुभव का दायरा कितना व्यापक हो सकता है।

'अजूबा' कहानी के किरदार पानी से जुड़ाव बना पाने में बच्चों को थोड़ी मुश्किल आ रही थी, लेकिन फिर भी वे एक व्यक्ति के तौर पर उसे स्वीकार करने के लिए तैयार थे।

इस कहानी पर अपनी बात रखते हुए राजा ने कहा, "यह तो समझ आता है कि कोई लड़की, लड़की को पसन्द करती है और कोई लड़का, किसी लड़के को पसन्द करता है। ऐसे कई लोग मैंने अपने आसपास देखे हैं। लेकिन 'पानी' तो अलग है, वह लड़के के साथ लड़का और लड़की के साथ लड़की जैसा महसूस करता है। वह लड़का और लड़की, दोनों से प्रेम करता है। थोड़ा अजीब लग रहा है कि ऐसा कैसे हो सकता है। लेकिन पानी समाज को एक सन्देश दे रहा है कि हमें अपनी इच्छा के अनुसार जीने का हक है। किसी को अपनी तरह से रहने और जीने की मनाही नहीं होनी चाहिए। लोग 'पानी' को 'पानी' की तरह रहने से रोकते हैं क्योंकि पानी की वजह से समाज का जेंडर का किला ढहने लगा था। पानी समाज की सोच बदलने वाला व्यक्ति है।"

वहीं इस विषय पर मंदीप पवार ने लिखा, "पानी जैसे लोग होंगे तो समाज में बहुत बदलाव होंगे और लोगों की धारणाएँ और पूर्वाग्रह भी टूटेंगे। पानी बच्चों को सोचने और प्रश्न करने वाला बनाता है। पानी के साथ खेलने से गाँव के बच्चे भी सवाल करने लगे थे, इस बात से भी गाँव के लोग परेशान होने लगे थे। सवाल करने वालों को हमेशा खराब माना जाता है। पानी जैसे लोगों को जीने में बहुत दिक्कत आती है। ये कहानी हिम्मत देती है।"

इस चर्चा में बहुत-से बच्चों ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। उनमें से कुछेक की कही बातें आपसे साझा कर रहा हूँ।

- "मुझे कहानी 'गुठली कैन फ्लाइ' में यह अच्छा लगा कि गुठली ने अपनी पहचान या वह जैसे रहना चाहती है, को अपनी माँ और घर वालों से डाँट खाने के बाद भी नहीं बदला। हम लड़के हों या लड़की, यह ज़्यादा महत्व नहीं रखता, महत्व यह रखता है कि हम खुद को कैसा मानते हैं, हम क्या महसूस करते हैं, हम अपनी पहचान को खुद कैसे देखते हैं। हर व्यक्ति को समाज में जगह और सम्मान मिलना चाहिए।" - करीना
- "इन्सान अपनी ज़िन्दगी जिस तरह से जीना चाहे, उसे उस तरह से जीने का हक होना चाहिए, लोग कौन होते हैं किसी की ज़िन्दगी के बारे में तय करने वाले। कोई लड़का यदि लड़की की तरह रहना चाहे या कोई लड़की लड़के की तरह रहना चाहे तो उसे वैसे ही रहने का हक है। लेकिन हम देखते हैं

कि समाज हर तरह की रोक-टोक करता रहता है। ऐसे कपड़े मत पहनो, ऐसे मत चलो, ऐसे मत बात करो, लड़की हो तो ज़रा धीरे बात करो - ऐसी बातें हर किसी को सुनने को मिलती हैं। हमें समाज में या तो लड़के की तरह रहना होता है या लड़की की तरह, नहीं तो घर और समाज के दरवाज़े हमारे लिए बन्द हो जाते हैं।"

- "जब तक हम समाज द्वारा बनाए नियमों को मानते रहेंगे, हम अच्छी लड़की या अच्छा लड़का होंगे किन्तु यदि हम समाज द्वारा बनाए इन नियमों के बाहर जाकर सोचेंगे, अपने हिसाब से अपनी ज़िन्दगी जीना चाहेंगे तो हम उसी समय परिवार व समाज के लिए खराब/बिगड़े हो जाएँगे।" इस पर बच्चों ने कहा कि "भले ही समाज हमारा विरोध करे, लेकिन हमारे परिवार के लोगों को तो हमारा साथ देना चाहिए।"
- एक लड़की ने कहा, "मेरा एक दोस्त है जो गुठली की ही तरह लड़कियों वाले कपड़े पहनना और सजना चाहता है। वह घर के काम करता है और उसे लड़कियों के साथ खेलना अच्छा लगता है लेकिन उसके पापा उसको बहुत डाँटते हैं, कहते हैं कि 'समाज में नाक कटवाएगा क्या?' वह अकेला उदास रहता है। बस्ती के लोग व उसके दोस्त भी उसे लड़की-लड़की कहकर चिढ़ाते हैं। कहते हैं, 'देखो, कैसा मटक-मटक कर चलता है, हाथ हिला-हिला कर बात करता है। अपने बालों को लड़कियों की तरह गूँथता है, चोटी रखता है'। अब हमें महसूस हो रहा है कि वह खुद को कितना अकेला पाता होगा। उसकी भावनाओं को समझने के लिए

किसी के पास फुर्सत नहीं। हमें उसका साथ देना चाहिए और उसको अकेलेपन से बाहर निकालने के लिए मदद करनी चाहिए।"

- नम्रता (परिवर्तित नाम) का कहना था कि "ऐसा लग रहा था मानो मेरी ही कहानी चल रही हो। जींस, टी-शर्ट पहनने पर मुझे भी लोग कहते हैं कि 'तू लड़की है, लड़की की तरह सलवार-कुर्ती पहना कर। ये क्या लड़कों की तरह कपड़े पहनकर घूमती है, सिर पर दुपट्टा रखा कर। ये तो समाज में हमारी बदनामी करवाएगी'। इस कहानी को पढ़कर मुझे अपनी बात कहने की हिम्मत आई। बहुत-से लोग हैं जो मेरी तरह सोचते हैं, जो अपनी एक अलग पहचान के साथ जीना चाहते हैं।"

समाज का बदलना बहुत ही कठिन है, परन्तु मुझे लगता है कि हम इतना तो कर सकते हैं कि गुठली, पानी या नवाब जैसे व्यक्ति अपने आपको जो समझते हैं, उनको वैसा ही समझें। अगर वह लड़का है और लड़की की तरह महसूस करता है तो उसे लड़की ही मानना चाहिए, और यदि लड़की खुद को लड़के की तरह महसूस कर रही है तो उसे लड़का ही माना जाए, न कि उसे किसी 'अन्य' का नाम दे दिया जाए।

सघन प्रयासों की ज़रूरत

बच्चों का कहना था कि इस तरह की और कहानियाँ लिखी जानी चाहिए ताकि लोगों में अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने की हिम्मत आ पाए और वे अपने तरीके से अपनी ज़िन्दगी जी पाने में सक्षम बन पाएँ, अपनी पहचान ज़ोर-से लोगों के सामने बता पाएँ। साथ ही, इससे अन्य लोगों में भी ऐसे लोगों के प्रति सम्मान का भाव पनपेगा जो समाज द्वारा दी गई पहचान के विपरीत जीना चाहते हैं। समाज में उनके लिए जगह बनेगी व उनका मज़ाक नहीं उड़ाया जाएगा। बच्चों में सामाजिक नियमों के प्रति एक तरह का गुस्सा भी दिख रहा था और कुछ बच्चे इन नियमों को तोड़ देने की बात कह रहे थे।

हम अपने आसपास के समाज में किन्नर समुदाय या समलैंगिकों के प्रति एक नकारात्मकता व अस्वीकार्यता का भाव देखते हैं। किन्तु ये कहानियाँ सभी को सम्मान, स्वाभिमान के साथ जीने व बराबरी का स्थान देने की बात कहती हैं। इन्हें बच्चों के साथ पढ़ने और चर्चा के बाद लगता है कि ये कहानियाँ बच्चों में एक नई सोच के दरवाज़े खोलने वाली बेहतरीन कहानियाँ हैं। आम तौर पर समाज में जिन मुद्दों पर संवाद की कोई भी जगह नहीं होती, ये कहानियाँ ऐसे मुद्दों पर संवाद की जगह बनाती हैं और संकुचित सामाजिक मान्यताओं को कठघरे में खड़ा करती हैं। इस तरह की कहानियाँ समाज के तय ढाँचे से बाहर निकलने व अपनी तरह से ज़िन्दगी जीने की आज़ादी की वकालत करती हैं व जेंडर और यौनिकता के दायरों को तोड़ने का काम करती हैं।

बच्चों के बीच यदि शुरुआत से ही इन मुद्दों पर चर्चा की जाए तो यह उन्हें परिपक्व होने व एक तार्किक सोच वाला इन्सान बनने में मदद करेगी। जो बच्चे या बड़े खुद को समाज की दी हुई पहचान से हटकर, कुछ अलग महसूस करते हैं, वे खुद को अभिव्यक्त कर पाएँगे और समाज द्वारा बनाई लड़के या लड़की की परिभाषा के तय खाँचे में खुद को ढालने के दबाव से शायद कुछ हद तक बाहर निकल पाएँगे।

ब्रजेश वर्मा: वर्तमान में *मुस्कान* संस्था, भोपाल द्वारा संचालित स्कूल 'जीवन शिक्षा पहल' में शिक्षक के रूप में कार्यरत हैं। हशियाकृत समुदाय मुख्यतः दलित, आदिवासी, विमुक्त और मुस्लिम समुदायों के बच्चों के साथ सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में शामिल हैं। बच्चों को कहनियाँ सुनाना, उनके साथ खेलना पसन्द है।

ई-मेल: brijeshverma3@gmail.com

सभी चित्र: उबिता लीला उन्नी: डिज़ाइनर व चित्रकार हैं। इन्हें बच्चों और बच्चों की कहानियों के साथ काम करना बहुत पसन्द है। वर्तमान में *एकलव्य* के डिज़ाइन समूह के साथ फैलोशिप के तहत काम कर रही हैं।

हिन्दी भाषा का साहित्यिक सफर!

अभिषेक दुबे

संदर्भ के अंक-136 में टी. विजयेंद्र का लेख *हिन्दी हाज़िर है* पढ़ा। इसका अनुवाद अमेय कान्त ने किया है। यह लेख आसान भाषा में आधुनिक हिन्दी से जुड़े कई मुद्‌दों को लेकर हमारे सामने आता है। यह हिन्दी भाषा की उत्पत्ति और लिपि के सवाल पर; बीसवीं सदी में साहित्य में इसी हिन्दी के प्रवेश और विकास की रूपरेखा पर रोशनी डालते हुए उर्दू व हिन्दी के सम्बन्ध और पीछे जाकर दखनी से इसके जुड़ाव का खाका भी पेश करता है। यह ज़रूर ही पाठकों के लिए हिन्दी भाषा और साहित्य से परिचित होने का माध्यम बनेगा।

इसे पढ़कर मन में कुछ कुलबुलाहट पैदा हुई। निश्चित ही, लगभग 150 सालों का इतिहास किसी एक लेख में बता पाना मुश्किल होता है। यह कहते हुए, कुछ बातें जो मुझे लगती हैं कि लेख में शामिल न हो पाईं या बहुत ही थोड़े में कह दी गईं, की तरफ लेखक और पाठकों का ध्यान दिलाना चाहता हूँ।

फोर्ट विलियम कॉलेज का ज़िक्र

हिन्दी-उर्दू की बात करते हुए फोर्ट विलियम कॉलेज का ज़िक्र ज़रूरी हो जाता है। इसकी स्थापना गवर्नर जनरल लॉर्ड वेलज़ली (1760-1842) ने सन् 1800 में की। आलोक राय ने एक किताब *हिन्दी नेशनलिज़्म* लिखी है और उसमें भाषा से जुड़े विवादों पर रोशनी डाली है।[1] हिन्दी-उर्दू के अलगाव के पीछे जो दो मुख्य वजहें उनके मुताबिक हैं, उनमें से एक तो फोर्ट विलियम कॉलेज के जॉन गिलक्राइस्ट (1759-1841) का हिन्दी और उर्दू को अलग-अलग भाषा मानना और इनके अध्यापन

चित्र-1: *फोर्ट विलियम कॉलेज, 1800, कलकत्ता। चित्र 'द वायर' से साभार।*

और लेखन के लिए अलग-अलग तरीकों का प्रस्ताव रखना। यह एक संस्थागत कदम होने के कारण इस विषय को सार्वजनिक मंच पर ले आया। यहीं से दो भाषा के सिद्धान्त की रेखा खींचने की कोशिश शुरू हुई और 'हिन्दुस्तानी' के दो रूपों – हिन्दी और उर्दू – की नींव पड़ी। और दूसरा, ईसाई मिशनरियों द्वारा अठारहवीं सदी के अन्त में छापेखाने और बुक सोसाइटियों के खोले जाने और अक्षरों के टाइप तैयार करने, जिसने हिन्दी के मानकीकृत रूप, व्याकरण, शब्दावली आदि को बनाने पर ज़ोर डालते हुए, हिन्दुओं की हिन्दुस्तानी और मुस्लिमों की हिन्दुस्तानी का अलग-अलग ढंग से विकास करना शुरू किया।

पहला टकराव

हिन्दी के विकास के अगले चरण में एक विवाद उठा जिनमें जिन दो लोगों के नाम उल्लेखनीय हैं, वे हैं – राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' (1823-1895) और राजा लक्ष्मण सिंह (1826-1896)। शिवप्रसाद सिंह ने हिन्दी और उर्दू को पास लाने की कोशिश करते हुए, हिन्दी में उर्दू शब्दों की हिमायत की और इसके उलट लक्ष्मण सिंह का झुकाव तत्समयुक्त हिन्दी की ओर था। कैलाश चन्द्र भाटिया ने अपनी किताब *हिन्दी भाषाः विकास और स्वरूप* में लिखा है, "उनके (शिवप्रसाद सिंह) प्रयास से पण्डिताऊपन से तो भाषा मुक्त हुई, पर वर्तनी में एकरूपता स्थापित न हो सकी।[2] उनकी शैली का बहुत विरोध हुआ, विशेषतः *इतिहास तिमिरनाशक* पुस्तक की भाषा को लेकर; क्योंकि प्रकारान्तर से वह उर्दू ही मानी गई (बगावत का शुबहा हुआ, पूछने पर उकूबत और सियासत के डर से झूठा इकरार कर दिया)।" आगे वे लिखते हैं, "...राजा लक्ष्मण सिंह दूसरी ओर विशुद्ध हिन्दी के पक्षधर थे। उर्दू को मुसलमानों की भाषा मानते थे।..." कुल मिलाकर, दोनों ही खुद तो भाषा को कोई परिनिष्ठित रूप न दे सके, लेकिन साहित्य के संसार में भाषा के सवाल को जीवन्त कर दिया। और इसी की झलक आगे चलकर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के साहित्य द्वारा हमें देखने को मिलती है।

भारतेन्दु युग

हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन में आलोचकों द्वारा किसी विशिष्ट कालखण्ड में साहित्य का प्रतिनिधित्व करने वाले रचनाकारों के नाम पर साहित्यिक आन्दोलनों के नामकरण करने का चलन रहा है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (1850-1885) उन चुनिन्दा रचनाकारों में पहले हैं, जिनके नाम पर हिन्दी साहित्य आन्दोलन का नामकरण किया गया, जिसे हम 'भारतेन्दु युग' के नाम से जानते हैं। यहीं से हिन्दी गद्य और कविता की

चित्र-2: भारतेन्दु हरिश्चन्द्र। ऐसे पहले लेखक, जिनके नाम पर हिन्दी के साहित्यिक आन्दोलन का नामकरण किया गया - 'भारतेन्दु युग'।

दृष्टि से नई धारा की शुरुआत हुई। भारतेन्दु को हिन्दी की ज़्यादातर गद्य विधाओं का प्रवर्तक माना जाता है। हिन्दी साहित्य को नई शिक्षा के प्रभाव से; देशहित और समाजहित से; दुनियाभर के नए विषयों से जोड़ने का महत्वपूर्ण काम इसी युग में शुरू हुआ। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (1884-1941) का एक उद्धरण देखिए, "जब भारतेन्दु अपनी मँजी हुई परिष्कृत भाषा सामने लाए तब हिन्दी बोलने वाली जनता को गद्य के लिए खड़ी बोली का प्रकृत साहित्यिक रूप मिल गया और भाषा के स्वरूप का प्रश्न न रह गया। प्रस्तावकाल समाप्त हुआ और भाषा का स्वरूप स्थिर हुआ।"[3] इससे साफ है कि अब साहित्य के क्षेत्र में हिन्दी का आगमन हो चुका था। इस हिन्दी में न राजा लक्ष्मण सिंह का विशुद्ध पण्डिताऊपन था और न ही सितारे हिन्द का उर्दूनुमा आग्रह बल्कि यह बीच का रास्ता था। भारतेन्दु मण्डल (भारतेन्दु युग के कुछ प्रमुख रचनाकारों का समूह) ने विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में हिन्दी में रचनाएँ लिखनी शुरू कीं। निबन्ध, नाटक, समालोचना आदि गद्य में प्रमुख रूप से लिखे गए। बड़े पैमाने पर बांग्ला और अँग्रेज़ी भाषाओं से अनुवाद का काम हुआ। और 'नए चाल की हिन्दी' कहकर कविता की भाषा में खड़ी बोली का आह्वान भी भारतेन्दु ने जाते-जाते कर दिया।

द्विवेदी युग और आधुनिक हिन्दी

जिस हिन्दी को भारतेन्दु युग ने स्थापित किया, उसी को आगे चलकर सुव्यवस्थित करने का काम द्विवेदी युग में हुआ। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी (1864-1938) इस युग के प्रवर्तक माने जाते हैं। इन्होंने हिन्दी की प्रसिद्ध साहित्यिक पत्रिका *सरस्वती* का लगभग 18 वर्षों (1903-1921) तक सम्पादन किया। वे एक कुशल सम्पादक थे। बांग्ला, मराठी, संस्कृत, अँग्रेज़ी आदि साहित्य के ज्ञाता थे। इन्होंने खुद तो साहित्य रचा ही लेकिन साथ-ही-साथ अपने समय के रचनाकारों को तराशने और हिन्दी में लिखने के लिए प्रोत्साहित करने का महत्वपूर्ण काम भी किया। उस युग का बिरले ही कोई प्रतिभाशाली लेखक होगा, जिसकी

रचना सरस्वती में प्रकाशित न हुई हो। प्रेमचन्द (1880-1936), मैथिलीशरण गुप्त (1886-1964), आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आदि इस युग के प्रमुख लेखक हैं। द्विवेदीजी के बारे में कई किस्से प्रसिद्ध हैं, वे व्याकरण के नियमों का कड़ाई-से पालन करते थे और अगर कोई लेखक इन नियमों का पालन न करता तो उसकी भेजी पाण्डुलिपि में सुधार कर वापस भेज देते थे। यह वह समय था जब हिन्दी भाषा और शैली का मानकीकरण किया जा रहा था। सबसे खास बात जो द्विवेदीजी के व्यक्तित्व में थी, उसकी ओर इशारा करते हुए हिन्दी के मार्क्सवादी आलोचक मैनेजर पाण्डेय (1941-) ने अपनी किताब *शब्द और साधना* में लिखा है, "द्विवेदीजी की साहित्य की धारणा अत्यन्त व्यापक थी। वे केवल कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक और आलोचना को ही साहित्य नहीं मानते थे। उनके अनुसार किसी भाषा में मौजूद सम्पूर्ण ज्ञानराशि साहित्य है। साहित्य का यही अर्थ वांङ्मय शब्द से व्यक्त होता है। अपनी इसी धारणा को ध्यान में रख उन्होंने कविता, कहानी और आलोचना के साथ अर्थशास्त्र, भाषाशास्त्र, इतिहास, पुरातत्व, जीवनी, दर्शन, समाजशास्त्र, विज्ञान आदि के ग्रन्थों और निबन्धों का लेखन किया।"[4]

भाषा एक ऐसी संरचना है जो कइयों के लिए मुक्ति का द्वार खोलने

SARASVATI—Reg. No. A248

सरस्वती

वार्षिक मूल्य ५) सम्पादक—महावीरप्रसाद द्विवेदी [प्रति संख्या ।=)

इंडियन प्रेस, प्रयाग, से छप कर प्रकाशित।

चित्र-3: *महावीरप्रसाद द्विवेदी के सम्पादन में छपने वाली साहित्यिक पत्रिका 'सरस्वती' के दिसम्बर 1916 में छपे अंक का आवरण पृष्ठ।*

में समर्थ होती है। इसी समर्थता से भारतेन्दु युग कई मायनों में उपेक्षित रहा। स्त्री चेतना, दलित चेतना आदि के विषय में उस समय बात तो शुरू हुई लेकिन दबे स्वर में। ज्ञात रहे कि भारतेन्दु युग के समकक्ष ही राजा राम मोहन राय, आर्य समाज आदि कई आन्दोलन बंगाल की धरती पर चल रहे थे और ऐसा मान लेना बड़ा मुश्किल है कि भारतेन्दु जैसे सजग लेखक उनसे अनभिज्ञ रहे हों। उस पर भी भारतेन्दु पर बंगाल के नवजागरण का गहरा प्रभाव था, वहाँ

के साहित्य पर भी उनकी नज़र लगातार बनी हुई थी। फिर भी इन मुद्दों को साहित्य में जगह न मिलना, कई सवालिया-निशाँ खड़े करता है।

लेकिन द्विवेदीजी ने भाषा के इस सामर्थ्य को पहचाना। इसका उदाहरण उनके साहित्य में अनेकों जगह मिलता है। द्विवेदीजी ने सितम्बर 1914 में *सरस्वती* पत्रिका में हीरा डोम नामक कवि की कविता 'अछूत की शिकायत' प्रकाशित की। यह कविता आधुनिक हिन्दी साहित्य में दलित चेतना की पहली कविता भी मानी जा सकती है। लेकिन यह हिन्दी का दुर्भाग्य ही कह लीजिए कि इस कवि की यह एकमात्र कविता उपलब्ध है। आगे लम्बे समय तक किसी ने इस कवि के बारे में कोई जानकारी इकट्ठा करने की ज़हमत नहीं उठाई। यह *सरस्वती* में छपी सम्भवतः एकमात्र भोजपुरी की कविता भी मानी जाती है। मार्क्सवादी आलोचक डॉ. रामविलास शर्मा (1912-2000) ने 1977 में प्रकाशित अपनी किताब *महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण* में जब इसका ज़िक्र किया तब जाकर हिन्दी के लोगों का ध्यान इस कविता पर पड़ा।

द्विवेदीजी जानते थे कि भाषा को व्यापक रूप देने के लिए, समाज में प्रचलित रूढ़ियों को तोड़ना ज़रूरी है। वे चाहते थे कि ज़्यादा-से-ज़्यादा हिन्दी के पाठक तैयार हों। ये पाठक केवल विद्वज्जन न होकर समाज के आम जन भी हों। उन्होंने भाषा को जागरण का माध्यम बनाने और फिर जागरण के माध्यम से भाषा की उन्नति का बीजारोपण किया। वे स्त्री-पुरुष समानता के शुरुआती प्रबल समर्थकों में से हैं। इस विषय पर उन्होंने अनेकों लेख लिखे और हिन्दी के पाठकों को जगाने की कोशिश की। इनमें 'गुजरातियों में स्त्री-शिक्षा', 'जापान की स्त्रियाँ', 'जापान में स्त्री-शिक्षा', 'स्त्रियाँ और संगीत', 'स्त्रियों का सामाजिक जीवन', 'एक तरुणी का नीलाम' (महावीर प्रसाद द्विवेदी रचनावली-7 में संकलित) आदि प्रमुख हैं।[5]

छायावाद और हिन्दी

भाषा और साहित्य, दोनों की खासियत है कि ये केवल एक जगह ठहर नहीं जाते, बल्कि अनवरत चलायमान रहते हैं। ये अपने समय के समाज से प्रभावित रहते हैं और अपने समय को कई मायनों में प्रभावित करने की क्षमता भी रखते हैं। हिन्दी का छायावादी आन्दोलन भाषा और भावों के विभिन्न स्तरों पर नवीनता का पुट लेकर प्रस्तुत होता है। इस युग में शब्दों में नए अर्थों को भरने और नई शैलियों को विकसित करने का महत्वपूर्ण काम हुआ। अब भाषा अभिधा से व्यंजना की ओर बढ़ चुकी थी। इसी की ओर ध्यान दिलाते हुए नामवर सिंह (1926-2019) ने अपनी

किताब *छायावाद* में लिखा है, "हर चीज़ के प्रति अथक जिज्ञासा और कुतूहल छायावाद का मंगलाचरण है, और यही वह रचनात्मक शक्ति है जिसके द्वारा कवि, दार्शनिक अथवा वैज्ञानिक अपने-अपने क्षेत्र में कोई नई चीज़ दे जाता है। छायावाद में इस नई शक्ति का उन्मेष था, इसलिए उसने हिन्दी साहित्य को कुछ नया दिया। द्विवेदी युग में अथवा रीतिकाल में इसकी कमी थी इसलिए इन युगों की रचनात्मक देन बहुत कम है।"[6] इस युग के प्रतिनिधि रचनाकारों में सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' (1899-1961), जयशंकर प्रसाद (1889-1937), सुमित्रानन्दन पंत (1900-1977) और महादेवी वर्मा (1907-1987) शामिल हैं।

चित्र-4: *छायावाद के प्रतिनिधि रचनाकार माने जाने वाले प्रमुख कवि – जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पंत, महादेवी वर्मा और सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'।*

आज हिन्दी में लोग धड़ल्ले-से मुक्त छन्द की कविताएँ लिखते हैं। उस समय यह करना इतना आसान नहीं था। यह काम किया निराला ने। उनकी कविता है, 'जूही की कली' (1916) जो सम्भवतः हिन्दी में मुक्त छन्द की पहली कविता मानी जाती है। इस रचना को द्विवेदीजी ने शुद्धतावादी आग्रह के चलते *सरस्वती* के लिए स्वीकार न करते हुए वापस लौटा दिया था। आखिरकार एक-न-एक दिन सम्पादक भी पुराने हो जाते हैं और भाषा और साहित्य में नए प्रतिमानों का प्रवेश हो जाता है। इसी प्रवेश को द्विवेदीजी जैसे कुशल सम्पादक भी अपनाने में असमर्थ रहे।

खैर, इस काल में प्रकृति पर अभूतपूर्व रचनाएँ लिखी गईं। आचार्य शुक्ल ने एक जगह लिखा है, "यदि किसी को अपने देश से प्रेम है तो उसे अपने देश के मनुष्य, पशु, पक्षी, लता, गुल्म, पेड़, पत्ते, कण, पर्वत, नदी, निर्झर सबसे प्रेम होगा; सबको वह चाह भरी दृष्टि से देखेगा।"[7] प्रकृति पर तो इन कवियों ने लिखा ही लेकिन साथ-ही-साथ स्वतंत्रता आन्दोलन, नारी मुक्ति, दलित मुक्ति और किसान-मजूरों की अभिव्यक्ति भी इनके साहित्य में मिलती है। इसकी वजह उस समय देश-दुनिया में चल रही घटनाएँ भी थीं और इन रचनाकारों की संवेदनशीलता भी।

रूसी क्रान्ति के बाद प्रगतिशील साहित्य के प्रसार से हिन्दी के लेखक भी प्रभावित रहे। इसकी झलक छायावादियों के समकालीन रहे कथाकार प्रेमचन्द में भी मिलती है। उन्होंने भी द्विवेदीयुगीन आदर्शवादिता से शुरुआत कर आदर्शोन्मुख यथार्थवाद तक का सफर तय किया जिसकी परिणति उनकी आखिरी रचनाओं, यानी 'कफन' (1936) या 'गोदान' (1936) आदि के रूप में दिखाई देती है। गौरतलब यह है कि छायावाद के प्रतिनिधि रचनाकारों ने ही इस युग के अन्त की घोषणा भी की। पंत का 'युगान्त' (1936) काव्य-संग्रह, निराला की कविताएँ 'भिक्षुक' (1923), 'वह तोड़ती पत्थर' (1935), 'कुकुरमुत्ता' (1941), प्रसाद का उपन्यास 'कंकाल' (1930) या महादेवी वर्मा कृत 'स्मृति की रेखाएँ' (1943), 'अतीत के चलचित्र' (1941) या 'शृंखला की कड़ियाँ' (1942) आदि इसका प्रमाण हैं।

प्रगतिवाद के कदम

प्रयोगवाद, प्रगतिवाद या नई कविता भले ही बाद के साहित्यिक आन्दोलन हों लेकिन इसकी पृष्ठभूमि छायावाद ही है। इन तीनों साहित्यिक आन्दोलनों की प्रवृत्तियाँ छायावादी कवियों, खास तौर पर निराला के साहित्य में देखने को मिलती हैं। प्रगतिवाद हिन्दी साहित्य का वह आन्दोलन था, जिसने आम जनता और उसके सौन्दर्यबोध को साहित्य के केन्द्र में लाकर खड़ा कर दिया। इसी वजह से इसकी भाषा आम जनता की भाषा थी। यह पीड़ित, शोषित, किसान-मजूरों की आवाज़ को बुलन्दी से उठाने वाला आन्दोलन था। इसके स्तम्भ माने जाने वाले रचनाकारों में नागार्जुन (1911-1998), केदारनाथ अग्रवाल (1911-2000), त्रिलोचन शास्त्री (1917-2007) आदि हैं। इन तीनों ही कवियों ने व्यवस्था से दो टूक लोहा लिया। एक और विशेषता इन कवियों की प्रकृति पर लिखी यथार्थवादी कविताएँ हैं। साहित्य में प्रकृति पर लिखने की परम्परा पुरानी रही है लेकिन इन तीनों कवियों ने प्रकृति पर अलग ढंग से लिखा। इन्होंने साधारण लोगों और परिस्थितियों से नाता जोड़ते हुए, प्रकृति पर अप्रतिम यथार्थवादी कविताओं का सृजन किया। मानवीकरण का इस्तेमाल इन कवियों ने खूब किया। नागार्जुन की कविता 'तीन दिन तीन रात' शहर में कर्फ्यू लगने पर पेड़ों का मार्मिक दृश्य प्रस्तुत करती है,

'बस सर्विस बन्द थी
तीन दिन, तीन रात
गुम रही, गतिहीन सड़कें
तीन दिन, तीन रात
पंक्तिबद्ध वृक्षों के
दिल भला क्यों नहीं धड़के
तीन दिन, तीन रात।'

इस आन्दोलन पर आगे चलकर आरोप लगा कि यह साहित्य को केवल कम्युनिस्ट पार्टी के प्रोपेगेंडा तक सीमित कर रहा है। और कविताओं की जगह ऐसा जान पड़ता है कि पार्टी के लिए नारे लिखे जा रहे हैं। इसमें कितनी सच्चाई है, यह फैसला पाठक खुद साहित्य पढ़कर कर सकते हैं। केदारनाथ अग्रवाल की कविता 'बच्चे के जन्म पर', इसके उदाहरण के लिए अक्सर उद्धृत की जाती है,

'हाथी-सा बलवान, जहाज़ी हाथों वाला और हुआ
सूरज-सा इन्सान, तरेरी आँखों वाला और हुआ
एक हथौड़े वाला घर में और हुआ,
माता रही विचार अँधेरा हरने वाला और हुआ
दादा रहे निहार सवेरा करने वाला और हुआ
एक हथौड़े वाला घर में और हुआ,
जनता रही पुकार सलामत लाने वाला और हुआ
सुन ले री सरकार! कयामत ढाने वाला और हुआ
एक हथौड़े वाला घर में और हुआ।'

ऐसी कई अन्य कविताएँ भी आपको जहाँ-तहाँ इन कवियों के साहित्य में मिल जाएँगी। फिर भी आज़ादी के पहले और बाद में भी इन कवियों ने अपनी प्रतिबद्धता जनता के प्रति जारी रखी। नागार्जुन को लोग 'बाबा' नागार्जुन नाम से पुकारते थे। इसके पीछे की वजह थी कि इन्होंने बच्चों के लिए भी कविताएँ लिखीं। हिन्दी के कम ही मुख्य धारा के लेखक हैं, जिन्होंने बाल-साहित्य की रचना के लिए कलम उठाई। बहरहाल, इस युग में भाषा और शिल्प के स्तर पर एक ठहराव तो दिखाई देने ही लगा था। और इसी की प्रतिक्रिया स्वरूप जन्म होता है हिन्दी के नए आन्दोलन 'प्रयोगवाद' का। इसी आन्दोलन ने प्रगतिवादियों का सबसे अधिक विरोध किया। और प्रगतिवादियों का भी आरोप रहा कि प्रयोगवादी आन्दोलन अमरीकापरस्त है।

प्रयोगवाद और नई कविता

खैर, प्रयोगवाद की शुरुआत पत्रिका *तार सप्तक* से मानी जाती है। इस पर फ्रायड के मनोविश्लेषणवाद; इलियट के निर्वैयक्तिकता के सिद्धान्त; अमरीकी नई समीक्षा आन्दोलन और द्वितीय विश्वयुद्ध का प्रभाव था। प्रयोगवाद व्यक्तिवाद का समर्थक था। ये पिछले प्राप्त ज्ञान के मुकाबले अपने रास्तों का अन्वेषी खुद बना। इनका मानना था कि भाषा और शैली – यानी रूप में आधारभूत परिवर्तन करने पर ही साहित्य को नई पहचान मिल सकती है। अज्ञेय (1911-1987) की कविता 'नए कवि से' की ये पंक्तियाँ देखिए,

'तेरा कहना ठीकः जिधर मैं चला
नहीं वह पथ था

मेरा आग्रह भी नहीं रहा मैं चलूँ उसी पर
सदा जिसे पथ कहा गया, जो
इतने-इतने पैरों द्वारा रौंदा जाता रहा कि उस पर
कोई छाप नहीं पहचानी जा सकती थी।'

प्रयोगवादी भाषा और शिल्प को बहुत महत्व देते थे, इसलिए ही नए कथ्य के लिए नई भाषा और शिल्प के हिमायती थे। उनका मानना था कि संवेदना की अनुभूति से ज़्यादा ज़रूरी सटीक अभिव्यक्ति की कला है। कवि और अकवि का यही अन्तर उनकी नज़र में था। नए प्रतीकों, बिम्बों, उपमानों की रचना इस दौरान हुई जिसने भाषा को समृद्ध किया। अज्ञेय की प्रसिद्ध कविता 'कलगी बाजरे की' का एक अंश देखिए,

'अगर मैं तुम को ललाती साँझ के नभ की अकेली तारिका
अब नहीं कहता,
या शरद के भोर की नीहार – न्हायी कुँई,
टटकी कली चम्पे की, वगैरह, तो
नहीं कारण कि मेरा हृदय उथला या कि सूना है
या कि मेरा प्यार मैला है।
बल्कि केवल यही: ये उपमान मैले हो गए हैं।
देवता इन प्रतीकों के कर गए हैं कूच।
कभी बासन अधिक घिसने से मुलम्मा छूट जाता है।

तार सप्तक के कवियों की दो धाराएँ आगे चलकर बनीं। एक व्यक्तिवादी धारा और दूसरी समाजवादी (मार्क्सवादी) धारा। एक के प्रतिनिधि अज्ञेय बने और दूसरी के गजानन माधव 'मुक्तिबोध' (1917-1964)। एक तरफ जहाँ अज्ञेय व्यक्ति से समाज की बात कर रहे थे, वहीं दूसरी तरफ मुक्तिबोध समाज से व्यक्ति की। यहीं से 'नई कविता' आन्दोलन की शुरुआत भी माननी चाहिए। नई कविता के मुख्य रचनाकारों में शमशेर बहादुर सिंह (1911-1993), रघुवीर सहाय (1929-1990), श्रीकान्त वर्मा (1931-1986), मुक्तिबोध आदि प्रमुख हैं। यह आज़ादी के बाद का समय था। इसलिए ही इस धारा के कवियों ने अपने समय के विरोधाभास, द्वन्द्व

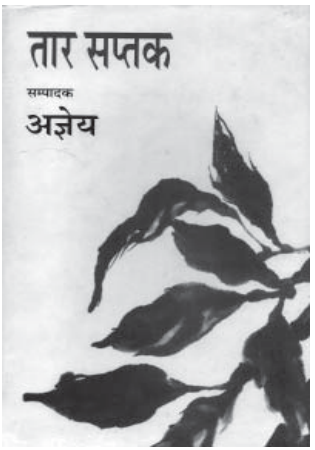

चित्र-5: *अज्ञेय के सम्पादन में निकलने वाली पत्रिका 'तार सप्तक' का आवरण पृष्ठ।*

आदि को पहचाना और अभिव्यक्ति की खोज की। मुक्तिबोध ने लम्बी कविताएँ लिखीं, जो थी तो गद्य प्रधान लेकिन इसकी लयात्मकता (नई कविता के कवियों ने भाषा में 'शब्द की लय' की बजाय 'अर्थ की लय' को ज़रूरी माना) ही नई कविता की खासियत थी। इन्होंने मनोविश्लेषणवाद को आधार बनाया और समाजशास्त्र से इसे जोड़ने का महत्वपूर्ण काम किया। और अपनी कविताओं में सामाजिक विडम्बनाओं का चित्रण तो किया ही लेकिन साथ ही, रचना-प्रक्रिया पर भी विशेष बल दिया। यानी रचना करते हुए, रचनाकार जिस पीड़ा से गुज़रता है। मुक्तिबोध की कविता 'अँधेरे में' इसका एक उदाहरण है। वे बेहतर दुनिया बनाने की तमन्ना रखने वाले और उसके लिए अभिव्यक्ति के खतरे उठाने वाले रचनाकारों में से थे। 'मैं तुम लोगों से दूर हूँ' कविता की लाइनें देखिए,

'इसलिए कि जो है उससे बेहतर चाहिए
पूरी दुनिया साफ करने के लिए मेहतर चाहिए
वह मेहतर मैं हो नहीं पाता
पर, रोज़ कोई भीतर चिल्लाता है
कि कोई काम बुरा नहीं
बशर्ते कि आदमी खरा हो।'

'नई कविता' आन्दोलन के बाद हिन्दी में कोई बड़ा साहित्यिक आन्दोलन देखने को नहीं मिलता बल्कि 1960 के बाद के साहित्य को समकालीन साहित्य कहा जाता है। इसकी कई प्रवृत्तियाँ ज़रूर दिखाई देती हैं। जैसे, अकविता, जनवादी कविता, नवगीत आन्दोलन, आज की कविता, युयुत्सुवादी कविता आदि। आज़ादी के बाद का यह साहित्य खास तौर से व्यवस्था के प्रति मोहभंग; आपातकाल; नक्सलबाड़ी आन्दोलन; नब्बे के दशक के बाद आई उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण की नीतियों; उत्तर-आधुनिकता के नतीजे में उपजी उपभोक्तावादी संस्कृति; साम्प्रदायिकता आदि विषयों को खुद में समेटे हुए है।

अभिषेक दुबे: फिलहाल *एकलव्य* प्रकाशन की शिक्षा साहित्य टीम के सम्पादकीय समूह में भागीदार। अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए.। साहित्य, भाषा और कला में विशेष रुचि। हिन्दी, भोजपुरी, अँग्रेज़ी और गुजराती भाषाओं में लेखन और अनुवाद।

सन्दर्भः

1. Rai, Alok: Hindi Nationalism, 2001, Orient BlackSwan
2. Bhatia, Kailash Chandra: Hindi Bhasha: Vikas Aur Swaroop, 2018, Prabhat Prakashan
3. Shukla, Ramchandra: Hindi Sahitya Ka Itihas, 2011, Vani Prakashan
4. Pandey, Manager: Shabd aur Sadhna, 2019, Vani Prakashan
5. Yayavar, Bharat: Mahaveer Prasad Dwivedi Rachnavali, Kitab Ghar Prakashan
6. Singh, Namvar: Chhayavad, 2018, Rajkamal Prakashan
7. Shukla, Ramchandra: Ras Mimans

रसोई में चिड़ियाघर

कृष्ण कुमार

उन दिनों मैं पहले दर्जे में था। स्कूल से लौटकर अक्सर अपने चाचा के घर जाया करता था। उनका घर हमारे मुहल्ले ही में था। वे अकेले रहते थे। घर का सारा काम खुद करते थे। उनकी मेज़ किताबों और कागज़ों से इतनी लदी रहती थी कि देखकर लगता था, मानो अभी ढह जाएगी! लेकिन ऐसा हुआ कभी नहीं क्योंकि मेज़ के पाए किसी हाथी के बच्चे की टाँगों जितने मोटे और मज़बूत थे।

जो हालत मेज़ की थी, लगभग वैसी ही हालत चाचा के दोनों कमरों और रसोई की थी। रसोई में भी एक मेज़ रखी थी जिसपर कभी-कभी कोई

किताब-कॉपी देखकर मैं चाचा को उसकी याद दिलाता था। रसोई की इस मेज़ के पास एक ऊँची अलमारी रखी थी जो अक्सर बन्द रहती थी लेकिन मुझे मालूम था कि चाचा ने इसमें तरह-तरह का सामान रखा है - बिस्कुट और डबल रोटी से लेकर बर्तनों और बड़े-बड़े डिब्बों तक।

चाचा की एक आदत मुझे अब तक याद है। उन्हें बात करते-करते छोटी-मोटी चीज़ों के बारे में कहानियाँ बनाने का शौक था। सच बात तो यह है कि उनके घर की शायद ही कोई चीज़ होगी जिसके बारे में कोई-न-कोई कहानी उन्होंने मुझे न सुनाई हो। मेज़ पर रखे टेबल लैम्प को वे शुभा नाम की लड़की बताते थे जिसे उन्होंने पाँच साल के लिए लैम्प बना दिया था। शुभा मन लगाकर नहीं पढ़ती थी। अब लैम्प बनकर उसे हर समय किताबों पर झुके रहना पड़ता था। शायद चाचा का खयाल यह था कि पाँच साल बाद जब वे लैम्प को फिर से लड़की बनाएँगे, तब तक शुभा बहुत सारी किताबें पढ़कर होशियार बन चुकी होगी।

यह तो खैर एक छोटी-मोटी कहानी थी। उन्होंने मुझे इससे ज़्यादा बड़ी और अजीब कहानियाँ सुनाई थीं। एक किस्सा किसी देवता और उसके साथी राजा से चाचा की लड़ाई का था। चाचा बहुत भारी आवाज़ में इस लड़ाई की बातें याद करते थे। यह लड़ाई सचमुच बहुत घमासान रही होगी। एक तरफ चाचा अकेले थे और दूसरी तरफ देवता और राजा इकट्ठे लड़ रहे थे, लेकिन चाचा की होशियारी के आगे उन दोनों की न चली।

मेरा खयाल है कि चाचा ज़रूर कोई कला जानते होंगे जिसे लोग जादू कहते हैं। लड़ाई में देवता और राजा को ज़मीन पर उतारना ज़रूरी था, इसलिए चाचा ने देवता के उड़नखटोले को पंखा बनाकर और राजा के हाथी को किताबों का रैक बनाकर घर भिजवा दिया। पंखा चाचा के कमरे की छत से अभी तक लटक रहा है और रैक में उनकी किताबें भरी पड़ी हैं। चाचा ने मुझे बताया था कि इनमें से कई किताबें जादू के बारे में हैं।

सवारियाँ गायब हो जाने से दोनों दुश्मन ज़मीन पर गिर पड़े और चाचा ने उन्हें आसानी-से पछाड़ दिया। लड़ाई खत्म हो जाने के बाद चाचा अपने दुश्मनों के महल देखने गए। चाचा ने मुझे बताया था कि पहले तो उन्हें देवता और राजा के महलों में कोई चीज़ अपने मतलब की नहीं दिखी। गाढ़े रंगों वाले लम्बे-लम्बे पर्दे, मोटे-मोटे बदसूरत खम्भे, भारी-भारी कुर्सियाँ वगैरह देखकर चाचा का मन इतना खराब हुआ कि उन्होंने बाहर निकलकर एक दुकान में चाय पी। चाय पीते हुए उनके मन में आया कि वे दोनों महलों की कुछ चीज़ों को अपने काम की चीज़ों में बदलकर घर

ले जा सकते हैं। यह सोचकर वे वापस गए। राजा के सिंहासन को उन्होंने एक मूढ़े में बदल दिया और लटकते हुए पर्दों के झाड़न बना लिए। देवता के महल में चाँदी का एक थूकदान था। इसे चाचा ने पेन्सिल छीलने के कटर में बदल लिया। इस तरह के और तमाम सामान से उन्होंने अपनी ज़रूरत की चीज़ें बना लीं।

इस लड़ाई के किस्से सुनाने के बाद चाचा मुझे अपने घर की वे सारी चीज़ें दिखाते थे, जिन्हें वे देवता और राजा से जीतकर लाए थे। चाचा की मेज़ की बगल में रखा मैला-सा मूढ़ा देखकर मैं मन-ही-मन राजा के सिंहासन की कल्पना करता और छत से लटकते बिजली के सफेद पंखे को देखकर सोचता कि यह उड़नखटोले की शक्ल में कैसा लगता होगा!

***

एक बार इतवार के दिन मेरा दोस्त लल्ला सुबह-सुबह आ गया और हम दोनों ने चाचा के यहाँ जाने का तय किया। हम उनके घर पहुँचे तो देखा कि चाचा रसोई में खड़े चाय बना रहे हैं। चाचा ने हमें रसोई में आ जाने को

कहा और पूछा कि हम लोग क्या खाएँगे। चाय पीने को उन्होंने नहीं पूछा क्योंकि चाचा को हमारा चाय पीना बिलकुल पसन्द नहीं था।

"पहले आप अलमारी खोलकर दिखाइए कि आपके पास आज क्या है, फिर बताएँगे।" मैंने खूब सोचकर चाचा से कहा।

चाय की पतीली स्टोव से उतारते हुए चाचा ने मेरी बात का ऐसा जवाब दिया कि मैं और लल्ला, दोनों भौंचक्के रह गए।

"इसमें कुत्ते, बिल्लियाँ और चूहे हैं!" इतना कहकर चाचा चुप हो गए और हम लोग ठगे-से खड़े अलमारी को देखते रहे। दो मिनट बाद लल्ला ने पूछा, "वे तीनों साथ-साथ कैसे रहते हैं? बिल्लियाँ चूहों को और कुत्ते बिल्लियों को खा क्यों नहीं जाते?"

"इसलिए कि वे अलग-अलग खानों में बन्द हैं। ऊपर कुत्ते हैं, बीच में बिल्लियाँ और नीचे चूहे।"

लल्ला की बढ़ती हुई हैरानी देखकर, मैंने उसकी मदद करनी चाही, हालाँकि, मैं खुद काफी परेशान था।

"लल्ला, यह सब झूठ है," मैंने कहा, "मैं तुम्हें सच बताता हूँ। मैंने अलमारी देखी है। ऊपर के खाने में डिब्बे हैं, बीच वाले में बर्तन और नीचे डबल रोटी, बिस्कुट वगैरह।" यह कहते हुए मेरे मन में आया कि आगे बढ़कर अलमारी खोल दूँ। लेकिन मैं मुड़ा ही था कि चाचा ने मुझे हाथ बढ़ाकर रोक लिया और कहा:

"इस अलमारी में जो जानवर हैं, वे बहुत डरपोक हैं। खास तौर पर लल्ला से वे डरते हैं। इसलिए अलमारी खुलते ही सब गायब हो जाएँगे।"

चाचा की बात सुनकर लल्ला की आँखें फटी रह गईं। उसने चाचा से पूछा, "वे सब कहाँ चले जाएँगे?"

चाचा का उत्तर जैसे पहले से तैयार था, "कुत्ते डिब्बे बन जाएँगे, बिल्लियाँ बर्तन और चूहे डबलरोटी, बिस्कुट वगैरह।"

मुझे लगा कि मैं चाचा की चाल कुछ-कुछ समझ रहा हूँ। इतनी देर में लल्ला को तरकीब सूझी। उसने अपनी आवाज़ दबाकर कहा:

"चाचा! मैं छिपकर देखूँगा, आप दरवाज़े को बिलकुल थोड़ा-सा खोलिए, किसी को कुछ मालूम नहीं पड़ेगा।"

और यह कहकर लल्ला सचमुच दबे पाँव रसोई के दरवाज़े के पीछे जाकर खड़ा हो गया। चाचा अब कर ही क्या सकते थे! उन्होंने आगे बढ़कर अलमारी की कुण्डी धीरे-से खींची और साथ में कहना शुरू किया:

"ये जानवर तुम लोगों से ज़्यादा सतर्क हैं। मेरा खयाल है, वे तुम्हारी बातें सुनकर ही बदल गए होंगे, पर शायद..."

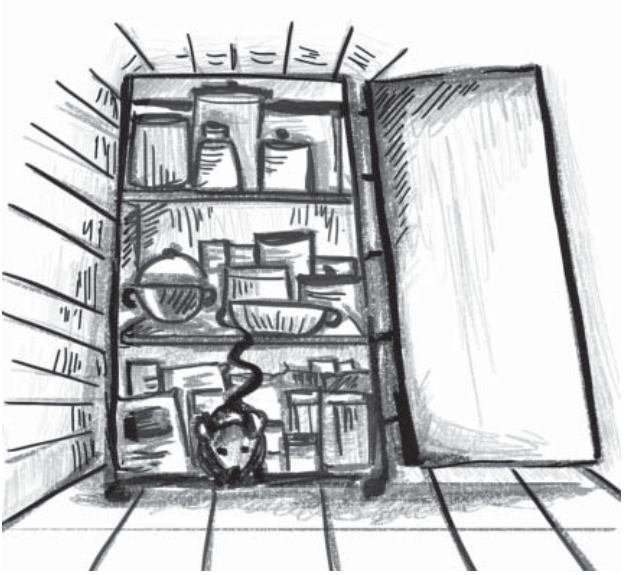

चाचा अपनी बात पूरी नहीं कर पाए। अलमारी का दरवाज़ा मुश्किल से एक-दो अंगुल खुला होगा कि नीचे के खाने से एक चुहिया निकलकर भागी। उसका निकलना था कि मैं और लल्ला चीखते हुए रसोई से भागे। चाचा हमें भागते देखकर हँसने लगे और बोले, "आज मालूम पड़ा कि मेरे जानवर तुम लोगों से कम डरपोक हैं।"

कृष्ण कुमार: प्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं लेखक। शिक्षा के मुद्दों पर सतत चिन्तन एवं लेखन। दिल्ली विश्वविद्यालय में शिक्षा के प्रोफेसर और एन.सी.ई.आर.टी. के निदेशक रह चुके हैं। भारत और पाकिस्तान में शिक्षा पर उनकी दो पुस्तकें, *मेरा देश तुम्हारा देश* और *शान्ति का समर* चर्चित रही हैं। उनकी हाल की पुस्तकों में *शिक्षा और ज्ञान, चूड़ी बाज़ार में लड़की* और बच्चों के लिए *पूड़ियों की गठरी* शामिल हैं।

सभी चित्र: पूजा के. मैनन: वर्तमान में कम्यूनिकेशन डिज़ाइन की छात्रा हैं। जन्म पलक्कड़, केरल में हुआ लेकिन एक जगह से दूसरी जगह यात्रा करने के कारण बहुत-से नए लोगों से मिलना हुआ। चूँकि वे अन्यथा बातचीत करने में झिझकती थीं, स्केचिंग ने उनके विचारों को सम्प्रेषित करने और टिप्पणियों का दस्तावेज़ीकरण करने में एक माध्यम का काम किया। धीरे-धीरे रेखाचित्र कहानियों में बदल गए जिन्होंने उन्हें जीवन और लोगों को समझने और खुद को व्यक्त करने में मदद की।

यह कहानी राजकमल प्रकाशन द्वारा प्रकाशित कृष्ण कुमार के कहानी संग्रह *आज नहीं पढ़ूँगा* से ली गई है।

सवालीराम

सवाल: चिड़िया पेशाब करती है या नहीं?

- राजेन्द्र कुमार, माध्यमिक विद्यालय, नामली, रतलाम, म.प्र., 1987

जवाब: तुम्हें पता होगा कि पक्षियों का शरीर काफी हल्का होता है ताकि वे आसानी-से उड़ सकें। यदि चिड़िया या किसी अन्य पक्षी के शरीर में, मनुष्य या अन्य चौपायों की तरह उसी अनुपात में पेशाब की थैली हो तो स्पष्ट है कि पक्षी का भार भी कुछ बढ़ जाता और साथ ही उड़ते समय उन्हें इस द्रव (पेशाब) के कारण काफी दिक्कत भी होती।

पदार्थ का व्यवहार - कुछ प्रयोग

द्रव पदार्थों का व्यवहार ठोस पदार्थों से कुछ अलग होता है। इसे समझने के लिए तुम कुछ प्रयोग कर सकते हो। जैसे एक बाल्टी लो, बाल्टी पानी से भर लो, बाल्टी का पानी जब थमा हुआ हो तो बाल्टी उठाकर कुछ दूर तक चलो और एकदम-से रुक जाओ। क्या हुआ? तुम देखोगे कि बाल्टी का पानी बाहर छलक जाता है।

इसी तरह तुम एक उबला और एक कच्चा अण्डा लेकर भी ऐसा ही प्रयोग कर सकते हो। उबले अण्डे को समतल सतह पर, खड़ा पकड़कर, तेज़ी-से घुमाओ। उबला अण्डा चूँकि एक ठोस की तरह है, अत: घूमने लगेगा जब कि कच्चे अण्डे में अन्दरूनी पदार्थ द्रव है। इसलिए वह सन्तुलित न हो पाने के कारण घूम नहीं पाता और लुढ़क जाता है।

अब इन्हीं अण्डों को लेकर एक और प्रयोग करें। इस बार दोनों अण्डों को आड़ी स्थिति में घुमाओ। घूमते

चित्र-1: *पक्षियों की उड़ान के लिए, उनकी पेशाब का द्रव रूप में होना अनुकूल नहीं होता।*

हुए उबले और कच्चे अण्डे को कुछ पल के लिए रोको, रोकने के लिए सिर्फ उंगली से छुओ और छोड़ दो। तुम देखोगे कि उबला अण्डा उंगली हटा देने पर भी रुका रहेगा जबकि कच्चा अण्डा कुछ पल बाद पुन: घूमने लगेगा। कच्चे अण्डे के अन्दर मौजूद द्रव के गति में बने रहने के कारण ऐसा होता है।

पानी से भरी बाल्टी और अण्डों वाले इन प्रयोगों से स्पष्ट है कि द्रव पदार्थों का व्यवहार ठोस पदार्थों से अलग होता है। जब कोई द्रव पदार्थ गति में होता है तो वह एकदम-से नहीं रुक पाता। इसलिए बाल्टी से पानी छलक जाता है या कच्चा अण्डा दुबारा चल देता है।

इसका कारण समझने के लिए तथा पक्षियों के शरीर में थैली न होने का कारण समझने के लिए, यह जानना ज़रूरी होगा कि ठोस पदार्थों के कणों के बीच आकर्षण (जुड़ाव) द्रव के कणों की तुलना में बहुत अधिक होता है तथा कणों का जमाव भी काफी पास-पास होता है, इसीलिए वे सघन होते हैं। जबकि द्रव पदार्थों में कणों का जमाव कुछ दूर-दूर होता है जिससे द्रव पदार्थों की सघनता कम रहती है। तभी द्रव पदार्थ समतल सतह पर चारों ओर फैल जाते हैं। द्रव के बहने और ठोस के न बह पाने की भी यही वजह है। एकदम-से रुक जाने पर बाल्टी तो हमारे साथ रुक जाती है परन्तु बाल्टी का पानी चूँकि गति में रहता है इसलिए एकदम-से रुक नहीं पाता और छलक जाता है।

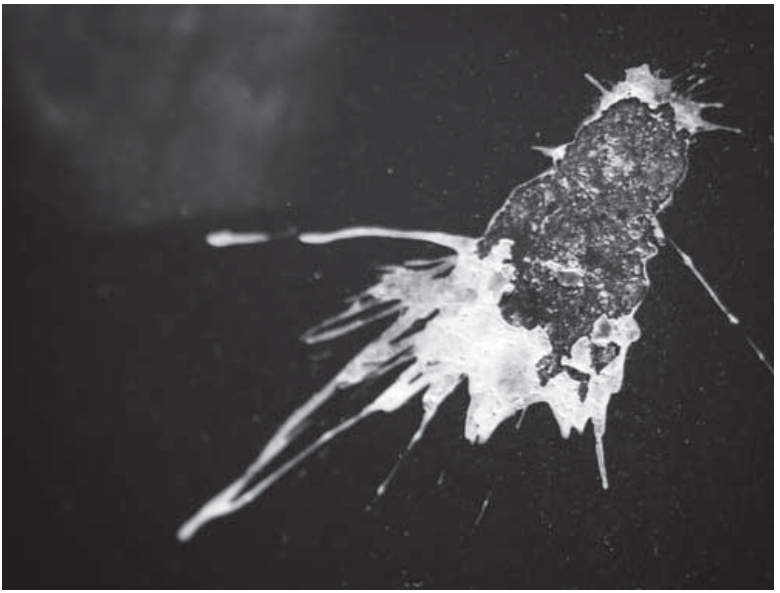

चित्र-2: *चिड़िया की बीट। इसमें जो सफेद-सा पदार्थ दिख रहा है, वही है चिड़िया की पेशाब का ठोस रूप।*

चिड़िया में पेशाब-थैली का होना

अब तुम समझ गए होगे कि यदि चिड़िया के शरीर में पेशाब की थैली होती तो उड़ती चिड़िया की गति में बदलाव के समय, तरल पदार्थ गति में होने वाले बदलाव में बाधा डालता। एकदम-से रुक जाने के प्रयास में तो चिड़िया को एक झटका-सा लगता। एकदम-से रुक जाने के अलावा उड़ते वक्त कहीं इधर-उधर मुड़ने की स्थिति में भी उसके लिए अपनी दिशा एकदम-से बदल पाना सम्भव नहीं हो पाता।

अतः चिड़िया या अन्य पक्षियों के शरीर में पेशाब की थैली होना, उनके लिए अनुकूल नहीं है। लेकिन यह मत सोचने लगना कि चिड़िया पेशाब नहीं करती, करती ज़रूर है पर ठोस रूप में, द्रव रूप में नहीं। तुमने चिड़िया की बीट देखी होगी। उसमें जो सफेद-सफेद-सा पदार्थ होता है, वही है चिड़िया की पेशाब का ठोस रूप, इसे यूरिक अम्ल भी कहते हैं।

यह सवाल और जवाब होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम के शिक्षकों के मंच होशंगाबाद विज्ञान बुलेटिन के अंक 22-23, वर्ष - फरवरी 1987 में प्रकाशित हुआ था।

सन् 1972 में शुरू हुए होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम (होविशिका) के 50 साल पूरे होने पर सन् 2022 के दौरान प्रकाशित किए जाने वाले *संदर्भ* के अंकों में हम होविशिका के माध्यमिक शालाओं के बच्चों द्वारा सवालीराम से पूछे गए सवाल साझा करेंगे। बच्चों को इन सवालों के जो उत्तर उस समय दिए गए थे, उनके साथ-साथ आपके द्वारा भेजे गए जवाब भी प्रस्तुत किए जाएँगे।

प्रकाशित जवाब देने वाले शिक्षकों, विद्यार्थियों एवं अन्य जन को एक हज़ार रुपए का पुस्तकों का गिफ्ट वाउचर भेजा जाएगा जिससे वे पिटाराकार्ट से अपनी मनपसन्द किताबें खरीद सकते हैं।

आप हमें अपने जवाब sandarbh@eklavya.in पर भेज सकते हैं।

इसी के साथ, सवालीराम के 4000 से अधिक प्रश्नों के रिसोर्स बैंक का उपयोग इस वेबसाइट के ज़रिए किया जा सकता है - www.sawaliram.org

सवाल: मनुष्य अधिकतर गरीब क्यों रहता है?

प्रहलाद भाटी, बोतलगंज, ज़िला - मंदसौर, म.प्र. (1987)

RNI No.: MPHIN/2007/20203

एकलव्य की किताबों को
पब्लिशिंग नेक्स्ट इंडस्ट्री अवॉर्ड्स 2021

रोहित कोकिल

कनक शशि

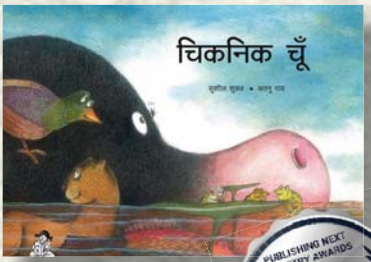

सुशील शुक्ल व अतनु राय

कैरन हैडॉक

प्रकाशक, मुद्रक, राजेश खिंदरी की ओर से निदेशक एकलव्य फाउण्डेशन, जमनालाल बजाज परिसर,
जाटखेड़ी, भोपाल - 462 026 (म.प्र.) द्वारा एकलव्य से प्रकाशित तथा
भण्डारी प्रेस, ई-3/12, अरेरा कॉलोनी, भोपाल - 462 016 (म.प्र.) से मुद्रित, सम्पादक: राजेश खिंदरी।